ओ३म्

जन-ज्ञान (मासिक)

मई 1996

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर- 28 मई, जिनका जन्मदिवस है

झांसी की रानी महारानी लक्ष्मीबाई जिनकी जन्म तिथि 18 जून है

ओ३म्
जन-ज्ञान
कृण्वन्तो-विश्वमार्य्यम्
वेदों
नई दिल्ली

हिन्दू राष्ट्र स्थापना हेतु संघर्ष करो

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

कार्यालय
2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5724741

प्रधान कार्यालय
वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम
लेखरामनगर (इब्राहीमपुर) पो. मुखमेलपुर
दिल्ली-36, दूरभाष : 7202249

संस्थापक
स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः

सम्पादक
पंडिता राकेश रानी
सह-सम्पादक, दिव्या आर्य
वार्षिक मूल्य - 60 रुपये
आजीवन - 501 रुपये
एक प्रति - 6 रुपये
विदेश में विमान से, 50 पौंड, 65 डालर
समुद्री डाक से 7 पौंड, 12 डालर
विदेश में आजीवन 5001 रुपये
मई 1996 वर्ष 31 अंक 1

सम्पादकीय

"जनज्ञान" का इकत्तीसवें वर्ष में प्रवेश

स्वदेश के इतिहास में मई मास का महत्त्वपूर्ण योगदान एक अमिट आख्यान है। ब्रिटिश दासता की श्रृंखला से मातृभूमि को बंधन मुक्त कराने की प्रबल आकांक्षा से आप्लावित स्वातन्त्र्य दूतों ने १८५७ में दस मई को ही अपने उस संघर्ष का सूत्रपात किया था, जो भारत की वर्तमान ही नहीं अपितु भावी पीढ़ियों के लिए भी प्रेरणा का पुंज बना रहेगा। स्वातन्त्र्य संग्राम की इस मशाल को महर्षि दयानन्द के महान शिष्य पं० श्याम जी कृष्ण वर्मा ने अपने सबल हाथों में संभाल कर ब्रिटिश सिंह को उसकी मांद अर्थात् लंदन में जाकर चुनौती दी और वहीं १८५७ के स्वाधीनता संग्राम की पचासवीं जयन्ती का सफल आयोजन इंडिया हाऊस में अपने सहयोगियों से १० मई १९०६ को कराया था।

इसी प्रकार १० मई, १९३६ को भी भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में एक और उल्लेखनीय पृष्ठ जुड़ा था, जब अंडमान की क्रूर कारा में तेरह वर्ष का सुदीर्घ कालखंड व्यतीत करने के बाद रत्नागिरि में स्थानाबद्ध रहे वीर विनायक दामोदर सावरकर, बैरिस्टर जमना दास मेहता आदि के प्रयास से नजरबंदी से पूर्णतः मुक्त हुए थे और देश में हिन्दुत्व के अभियान की कमान अपने सबल हाथों में संभाली थी।

देव दयानन्द के महान संदेश के प्रचार और प्रसार को ही अपना एक मात्र दायित्व मानकर कर्त्तव्य समर में सक्रिय हुए पंडित भारतेन्द्रनाथ (स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः) ने भी मई मास के ऐतिहासिक महत्त्व से प्रेरित होकर 'जनज्ञान' मासिक का प्रकाशन सन् १९६५ में प्रारम्भ किया था। जनज्ञान इस माह के साथ ही साथ अपने जीवन के इकत्तीसवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। महात्मा वेदभिक्षुः ने जनज्ञान को वेद प्रचार और विशुद्ध राष्ट्रवाद का एक सबल माध्यम बनाने की आकांक्षा अपने मानस में संजोई थी। उन्होंने जनज्ञान को अर्थोपार्जन का माध्यम नहीं बनाकर प्रचार का एक सशक्त आधार बनाने की कल्पना की थी। इसीलिए वह कभी उस तथाकथित व्यावहारिकता की भावना से प्रेरित होकर आचरण करने को तैयार नहीं हुए जो सिद्धान्तों को तिलांजलि देकर संपदा के अर्जन का पथ प्रशस्त करती है। 'जनज्ञान' देव दयानन्द के दर्शन और वेद के पावन आलोक से धराधाम को आलोकित करने के अपने संकल्प के निर्वाह के पथ पर ही सतत सक्रिय रहा है। सत्य का प्रतिपादन और असत्य का उच्चाटन ही उसकी परम्परा है तथा अराष्ट्रीय प्रवृत्तियों से राष्ट्र को सजग करना ही उसकी विधा है।

जनज्ञान ने अपनी इसी सिद्धान्त निष्ठा के कारण अभावों और अभियोगों को झेला है। किन्तु हमें इस बात का गर्व है कि आज इस अर्थ प्रधान युग में जब लाखों करोड़ों की पूंजी से प्रकाशित अनेक साप्ताहिक, मासिक और दैनिक समाचार चार दिन की चमक-दमक के बाद अतीत की बात बन जाते हैं, तब भी 'जनज्ञान' अपनी बात आघात-प्रत्याघात को झेलकर भी निरन्तर तीन दशक से

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक : पंडिता राकेश रानी 2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 द्वारा डीलक्स आफसेट प्रिन्टर्स 305/4 शहजादा बाग दिल्ली से मुद्रित एवं प्रकाशित

कह रहा है। हमें गर्व है इस बात का भी कि इस लम्बे कालखंड में भी "जनज्ञान" ने अपनी किसी भी मास का कोई अंक नहीं गंवाया और प्रति मास अपने कृपालु पाठकों के द्वार पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। महात्मा वेदभिक्षुः को अपनी नश्वर काया का परित्याग किए अब लगभग एक दशक का कालखंड बीत चुका है, किन्तु उनका यशकाया का प्रकाश हमारा संबल बना रहा है। हम प्रतियोगिता की इस मंडी में भी उनकी साधना की पूंजी और 'जनज्ञान' के हजारों कृपालु पाठकों के सहयोग को सम्बल बनाकर स्वाभिमान सहित खड़े हैं। इसे हम अपना पौरुष नहीं अपने पाठकों की सहयोग भावना से अर्जित शक्ति ही मानते हैं।

'जनज्ञान' के इक्तीसवें वर्ष में प्रवेश के इस अवसर पर हम उसकी आर्थिक स्थिति को संवारने की आकांक्षा से आप सब पाठक बन्धुओं के द्वार पर एक अनुनय आग्रह को लेकर उपस्थित हैं। हमारा आग्रह है कि जनज्ञान का प्रत्येक पाठक हमें इस वर्ष कम से कम एक और नया सदस्य बनाये और साथ ही हम यह भी आशा करते हैं कि पाठक बन्धु अपने क्षेत्र के व्यापारी और उद्यमी बन्धुओं को जनज्ञान में प्रकाशनार्थ विज्ञापन भेजने को प्रेरित करें।

आपका योगदान ही हमें अब तक 'जनज्ञान' को सतत प्रकाशित करने का साहस प्रदान करता आया है। हमें गर्व है कि आप सभी ने अपने सहयोग का हाथ बढ़ाकर अपने प्रिय 'जनज्ञान' को आज की भौंड़ी प्रतियोगिता के इस युग में भी अपने कलेवर को सुस्वच्छ रखते हुए वैदिक धर्म और हिन्दुत्व के प्रचार का सफल माध्यम बनाए रखने में सहायता की है। अब जबकि उदारीकरण के इस युग में कागज के भाव दिन प्रतिदिन नया कीर्तिमान छू रहे हैं, मुद्रण व्यय भी वृद्धि पा रहा है, हमारे लिए अभावों का शिकंजा कसता जा रहा है। इस चक्रव्यूह के भेदन में आपका सहयोग चक्र ही हमारा बल है। हम अपना कर्त्तव्य निभा रहे हैं, आप भी स्वकर्त्तव्य निभाइए, सहयोग का हाथ बढ़ाइए। आपमें से प्रत्येक बंधु यदि वर्ष में अपने शुल्क के अतिरिक्त मात्र एक सौ रुपए अथवा जो भी सम्भव हो सके राशि दान स्वरूप प्रदान करने की उदारता दर्शा सके तो हम 'जनज्ञान' स्थायी निधि की अपनी योजना को क्रियान्वित कर सकेंगे। हमें विश्वास है आपका सहयोग जनज्ञान को अभाव के रोग से मुक्ति दिलाएगा और यह प्रिय मासिक स्वकर्त्तव्य पालन में असिधारा व्रत का निर्वहन करेगा। हम सिद्धान्त पथ पर सतत संकल्पबद्ध रहकर 'जनज्ञान' की ज्योति को गतिमान रखने का आपको विश्वास दिला रहे हैं और आप हमारे अनुरोध को स्वीकार करने की उदारता दर्शाइए।

युग द्रष्टा सावरकर को नमन

वीर विनायक दामोदर सावरकर को चिर विदाई लिए अब तीन दशक का कालखंड बीत गया है। वे दीपक बनकर जले थे, अब नक्षत्र बन चुके हैं। उनके महान त्याग और तपस्या के समक्ष नभराज हिमालय भी नतमस्तक था तो उनकी प्रबल वीरता को देखकर पौरुष और पराक्रम को भी आश्चर्य होता रहा। २८ मई, १८८३ को महाराष्ट्र के एक छोटे से नगर भगूर में जन्मा वह युग पुरुष अपने स्थूल रूप में तो हम सबकी दृष्टि से ओझल और दूर है किन्तु उसका हिन्दुत्व का दर्शन, निराशा के इस उद्भ्रांत वातावरण में भी राष्ट्र के लिए प्रकाश पुंज बनकर **"तमसो मा ज्योतिर्गमय"** के वैदिक आह्वान् का प्रेरक स्मरण कर रहा है।

विश्व का वह अद्वितीय क्रांतिकारी था तो महान दिशानायक और राष्ट्र उन्नायक भी। आर्य कभी दासता को स्वीकार नहीं करता इस तथ्य को उस महामानव ने अपने जीवन व्रत से साकार किया था। अंडमान के क्रूर कारागार में उसने लगातार तेरह वर्ष तक विकराल वज्रदंडों को झेला तो जिनके लिए उसके त्याग और बलिदान तथा व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं का परित्याग कर सतत् जागरण का संदेश देते रहने को ही अपनी जीवन विधा बनाया था, उस अभागे समाज ने भी उसकी चेतावनियों के प्रति उपेक्षा का ही भाव अपनाया। हिन्दू राष्ट्र की इस प्रवृत्ति ने उसे निराश और हताश ही नहीं किया, अपितु जीवन के अंतिम क्षण तक उसका यह अडिग विश्वास बना रहा कि यह राष्ट्र एक न एक दिन अपने प्रेरक अतीत से प्रेरणा लेकर अपने नैराश्यपूर्ण वर्तमान को निहारेगा और परिस्थितियों पर सांगोपांग विचार कर अपने कर्त्तव्य का निर्धारण कर अपने भविष्य को निश्चय ही संवारेगा।

उसे मदन लाल ढींगरा सरीखे अपने उस कर्त्तव्यनिष्ठ शिष्य पर सदा अभिमान रहा, जिसने लंदन के इम्पीरियल इन्सटीट्यूट में कर्जन वायली को भारतीय शौर्य का सोपान कराकर हंसते-हंसते फांसी का फंदा चूमा था तो उन्हें गर्व था नेताजी सुभाष सरीखे अपने उन सहयोगी पर भी, जिन्होंने आजाद हिन्द सेना की कमान संभाल कर उनके सद् परामर्श को स्वीकार किया था।

यह प्रतिष्ठा और सुख, सुविधा के स्थान पर सिद्धान्तनिष्ठा ही उनके जीवन की पूंजी थी, इसीलिए उन्होंने प्रादेशिक राष्ट्रीयता की पथ गामिनी कांग्रेस के मंच पर जाने के स्थान पर हिन्दू महासभा को ही अपनी राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बनाया था। उस भविष्य दृष्टा ने १९४० में ही असम की समस्याओं के प्रति उस प्रदेश को चेतावनी दी थी तो १९४१ में कश्मीर के भविष्य को लेकर भी अपनी आशंका व्यक्त कर दी थी। १९४२ में ही उस दूरदर्शी नेता की वाणी से गूंजा था यह सतर्कतापूर्ण स्वर "कहीं भारत छोड़ो का नारा ही भारत तोड़ो में न बदल जाय"। १८५७ में ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध प्रथम स्वाधीनता संग्राम की शताब्दी के उपलक्ष में भारत की राजधानी दिल्ली में आयोजित सुविशाल सभा में उन्होंने यह चेतावनी दी थी "इस देश के समक्ष दो ही मार्ग हैं। युद्ध और बुद्ध। हमारा राष्ट्र यदि बुद्ध की पूजा करना चाहता है तो उसे युद्ध की सिद्धता रखनी होगी।" भारतीय युवकों को वह स्वतंत्रता की रक्षार्थ सशस्त्र सेनाओं में भर्ती होने का आह्वान

इस अंक में पढ़ें

(आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखकों की रचनाओं में अभिव्यक्त सभी विचारों से पूर्णतः सहमत हो।)

"जनज्ञान" का इकत्तीसवें वर्ष में प्रवेश
—सम्पादकीय १
आओ भारत का कल्याण करें
— महात्मा वेदभिक्षुः की अमरवाणी ४
सामयिक विचार ५
लोकसभा त्रिशंकु हुई तो क्या होगा? ६
—सुभाष कश्यप
आपके पत्र ९
ईशोपासना क्यों करें? १०
—जयप्रकाश शर्मा
सामवेद में 'स्वराज्यम्' की व्याख्या १३
—प्रमिला आर्य
तात्या अतिमानव सावरकर १४
—विनय कुमार सिंघल, अधिवक्ता
काश! असमवासियों ने वीर सावरकर की चेतावनी पर ध्यान दिया होता १५
—राधिका मोहन गोस्वामी
आग्नेय जीवनव्रती वीर सावरकर १८
—वन्देमातरम् रामचन्द्र राव
सावरकर की हिन्दुत्व व्याख्या ही स्वीकार थी डॉ० हेडगेवार को २१
— यादव राव जोशी
प्रथम बार वीर सावरकर के दर्शन का प्रेरक क्षण २३
—गोपाल गोडसे
जब महान आर्य संन्यासी स्वामी आत्मानन्द जी ने वीर सावरकर के चरण छुए २४
—पं० इन्द्रराज
महान दूरदर्शी थे वीर सावरकर २५
—वसन्त कृष्ण ओक
जब सावरकर जी की शोभायात्रा ने जिन्ना के जुलूस को मात दी २६
—ओमप्रकाश कपड़ेवाले
लाहौर में वीर सावरकर के दर्शन २८
—इन्द्रसेन शर्मा
अकेले भी रहो तो हिन्दू ध्वज को थामे रखना ३०
—चमन लाल क्षत्रिय
भुला दिया गया वह प्रथम राष्ट्र-गीत ३२
—वचनेश त्रिपाठी 'साहित्येन्दु'
साहस और कुर्बानी की मिसाल—खुदीराम बोस ३३
—डॉ० के०एल० जौहर
चातुर्वर्ण व्यवस्था कितनी वैदिक? ३५
—वी० प्रकाश
एक सच्चे आर्य—डॉ० भीमराव अम्बेडकर ३८
—कूनराड एल्स्ट
मैथिली शरण गुप्त के काव्य में राष्ट्रीय भावना ४१
—दीप शिखा शर्मा
पागल कौन? गाय या आदमी ४३
—डा० ए०के० अरुण
स्वास्थ्य चर्चा ४६
समाचार दर्शन ४८

करते रहे तो उन्होंने सरकार को समय-समय पर यह सद् परामर्श भी दिया कि वह आधुनिकतम अणु आयुधों का निर्माण करवाए। उस युग पुरुष के निधन पर देश की तत्कालीन प्रधानमंत्री ने अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए कहा था "सावरकर जी का निधन हमारे बीच से आधुनिक भारत के एक महान व्यक्तित्व की चिर विदाई है। उनका नाम ही साहस और देशभक्ति का परिचायक है। वे क्रांतिकारियों की महान् परम्परा में ढले थे और असंख्य जन उनसे प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं।

वीर सावरकर अजेय वीर के समान जिए और अजेय वीर के तुल्य ही मरे। देशभक्ति के जिस सांचे में वे ढले थे, वह सांचा वज्र का था। अंतिम क्षणों तक उनका वज्र संकल्प अपने शौर्यगृह में अटल अविचल रहा। न वे झुके और न टूटे, ऐसी अद्वितीय थी उनकी शौर्य स्फूर्ति। अंग्रेजों ने अपनी विभाजन और शासन की नीति से देश को जिन बीसियों खंडों में विभाजित कर दिया, वीर सावरकर ने उसे राष्ट्र का निर्धारित व्यक्तित्व स्वीकार न कर एक अखंड भारत राष्ट्र के सनातन अस्तित्व को ही सर्वोपरि महत्त्व दिया। मृत्यु पर्यन्त उनका यही अक्षुण विश्वास रहा कि देश में जो विभक्तियां प्रचारित हैं, वे कृत्रिम हैं एवं देश को विघटित करने के लिए ऊपर से थोपी हुई हैं, अंतराल में इस देश की अविभक्त संस्कृति का मूल एक ही है। राष्ट्र के इसी राजनीतिक व्यक्तित्व को अपनी श्रद्धा में प्रतिष्ठित कर उन्होंने देशभक्ति के अपने सिद्धान्त निर्धारित किए थे, जिन पर वह आजीवन सिंह शार्दूल के तुल्य निःशंक निर्भीक आचरण करते रहे। उस महापुरुष का स्मरण आने के साथ ही साथ आर्यावर्त्त के उन ऋषि मनीषियों के तपःपूत ओजस्वी व्यक्तित्व सहसा मन पर चित्रित हो उठते हैं, जिन्होंने इस राष्ट्र के शरीर और प्राणात्मा को अपने मानस मन्दिर में श्रद्धा सहित पूजा था और राष्ट्र की आस्था के मध्य शक्ति स्फूर्ति मंत्र की काया में बद्धमूल किया था।

वीर सावरकर हुतात्मा संकल्प में ढले योद्धा एवं कर्मशूर ही नहीं थे, वे महान चिंतक, लेखक, कवि और इतिहासकार तथा बेजोड़ वक्ता भी थे। वर्षों तक अपने विरोधियों से लांछित संतप्त रहकर भी उनकी मानसिकता कभी विचलित नहीं हुई। अंतिम घड़ी तक वे द्वेष की भावना से सर्वथा मुक्त रहे।

इस देश की कालात्मा ने भारत माता की आरती के थाल में जो अमर प्राण दीपक संजो रखे हैं, वीर सावरकर का जीवन दीप भी अब उस पंक्ति में सम्मिलित है। हम उस युगद्रष्टा की जयंती के इस पावन अवसर पर राष्ट्रात्मा के उस ज्योतिर्मय दीप को अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं। वीर सावरकर देशभक्ति की स्फूर्ति में अतुल साहस और अप्रतिक शौर्य को अनुप्राणित करने वाले व्रती वीर थे, महावीर थे। आज कृतज्ञ राष्ट्र उनके इस व्रत को सश्रद्धा अपनी कर्मचेष्टा में उतारने का संकल्प ग्रहण करे यही युग का आह्वान है। ❑

महात्मा वेदभिक्षुः की अमरवाणी

आओ भारत का कल्याण करें

यदि कोई देशभक्त योग्य व्यक्ति भारत का प्रधानमंत्री हो जाए तो ६ माह में देश का कायाकल्प कर सकता है। इसके लिए स्वार्थ, गद्दी की भूख से ऊपर उठकर उसे केवल राष्ट्रीयता की दृष्टि से कार्य करना होगा। कार्य निम्न होने चाहिएं :-

१. भारत में केवल संसद रहे, सभी प्रान्तीय विधान सभाएं भंग कर दी जाएं। कलेक्टर, कमिश्नर व गवर्नर द्वारा केन्द्र शासन संभाले। इससे प्रतिवर्ष अरबों रुपयों का व्यय बच जाएगा।

२. संसद सारे भारत के नागरिकों के लिए समान नियम बनाए।

३. महर्षि दयानन्द के निर्देशानुसार देश के सभी बच्चों को ५ वर्ष की आयु से १८ वर्षकी आयु तक बोडिंग में रहना अनिवार्य हो। निर्धन का बालक व प्रधानमंत्री का बालक एक ही विद्यालय में शिक्षा पाए। एक से भोजन-वस्त्र, निवास, मनोरंजन की सुविधाएं उनके लिए जुटायी जाएं। प्रत्येक विद्यालय के साथ बोर्डिंग अनिवार्य हो।

हमारा निश्चय मत है कि जब तक शिक्षा में समानता न होगी तब तक अस्पृश्यता, असमानता, जातिभेद नहीं मिट सकेगा। आज से १०० वर्ष पहले दूर द्रष्टा महर्षि दयानन्द ने निम्न विचार प्रगट किए थे—ध्यान से पढ़िए—

"सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जायें, चाहे वह राजकुमार व राजकुमारी हों, चाहे दरिद्र के सन्तान हों। सबको तपस्वी होना चाहिए। माता-पिता अपने सन्तानों से वा सन्तानें अपने माता-पिता से न मिल सकें और न किसी प्रकार का पत्र व्यवहार एक दूसरे से कर सकें जिससे संसारी चिन्ता से रहित होकर केवल विद्या बल बढ़ाने की चिन्ता रखें। इसका अभिप्राय यह है कि इसमें राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पांचवें अथवा ८वें वर्ष के आगे कोई अपने लड़के व लड़कियों को घर में न रख सके।"

यह विचार कितने क्रांतिकारी हैं, इसकी कल्पना राष्ट्र नेताओं ने नहीं की। भारत की सारी समस्याओं का हल इसी विचार में निहित है। इसे लागू करने से मजहब, जाति, वर्ण, गरीबी, अमीरी की दीवारें समाप्त हो जाएंगी। १०-१५ वर्ष एक साथ उच्च नैतिक वातावरण से बाहर आकर व्यक्ति जब कार्यक्षेत्र में नागरिक होगा, तो वह देशभक्त भी होगा और सच्चा मनुष्य भी।

केवल इन तीन बातों को करने से देश की एकता, अखंडता स्थापित होकर सच्ची समानता का युग आरम्भ होगा। भारत की स्वतंत्रता तभी वरदान बनेगी।

देश आज धधक रहा है। विघटन का ज्वालामुखी विस्फोटक है। उलझनें बढ़ रही हैं, केवल इसलिए कि केन्द्रीय शासन बुद्धिहीन है, कायर है। प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी जैसी शक्तिशाली प्रधान मंत्री यदि चाहतीं तो ८-१० वर्ष में देश का कायाकल्प हो सकता था, पर हायरे दुर्भाग्य, देश की चिन्ता ही किसे है! सब को तो बस अपनी ही चिन्ता सता रही है।

अब भारत के नागरिकों को इस दिशा में सोचना होगा और कोई ऐसा राजनैतिक दल गठित करना होगा, जो उग्र राष्ट्रवाद और समानता का मानने वाला हो। १८ करोड़ अस्पृश्यों की आहें उन पर होने वाले अत्याचार बातों से नहीं मिटेंगे। इसके लिए राज्य को आमूल क्रान्ति करने के लिए स्वयं अग्रसर होना होगा। वोट की भिक्षा के लिए देश का भविष्य धूमिल करने वाले नेता देश के दुश्मन हैं। यह हमें कहना होगा।

भारत एक है। भारत के नागरिक वह हैं। सबके अधिकार कर्त्तव्य समान हैं। सब एक हैं। भारत उनका है जो भारत के हैं।

अलगाव की मांग कुचलनी होगी, पृथकता की भावना जलानी होगी, असमानता, जातिवाद समुद्र में डुबोने होंगे, आओ वीरो, भारत मां के लोह लाड़लो! आओ! और हमारा साथ देकर एक नया सूरज उगाने की तैयारी करो।

(नवम्बर १९८१ "जनज्ञान" से उद्धृत)

सामयिक-विचार

समान नागरिक संहिता

विगत दिवस प्रधानमंत्री नरसिंह राव ने अपनी विभिन्न चुनावी सभाओं में जो कुछ कहा उसमें बहुत सी बातें अत्यन्त सटीक हैं और उनसे असहमत नहीं हुआ जा सकता। उदाहरण स्वरूप यह बात कि उत्तर प्रदेश के विकास के अभाव में देश पिछड़ जाएगा। इसी तरह उन्होंने कांग्रेस के बारे में जो कुछ कहा वह भी उचित हीं है; उन्हें यह सब कहने का अधिकार है। चुनावों के इस माहौल में कांग्रेस की नीतियों की जोर-शोर से वकालत करना स्वाभाविक ही है, लेकिन उनकी यह बात बिल्कुल भी समझ में नहीं आ रही है कि यदि समान नागरिक संहिता लागू कर दी जाएगी तो उसके दुष्परिणाम स्वरूप देश बिखर जाएगा। क्या कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से उनके लिए यह कहना उचित था? क्या केवल राजनीतिक दलों को ही देश की चिंता है और किसी को नहीं? क्या समान नागरिक संहिता के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने जो कुछ कहा उसका कोई अर्थ नहीं? सर्वोच्च न्यायालय का यह दृढ़ विश्वास है कि देश में समान नागरिक संहिता होनी ही चाहिए। यह भी विस्मृत नहीं किया जा सकता कि संविधान सभा ने जो नीति निर्देशक सिद्धान्त तय किए उनमें यह घोषणा की गई कि देश में शीघ्र ही समान नागरिक संहिता लागू की जाए। निश्चित रूप से शीघ्र का अर्थ शताब्दियां नहीं होता।

संविधान को लागू हुए चार दशक से भी अधिक का समय बीत चुका है और इतना समय बीत जाने के बावजूद हमारे देश के सत्तारूढ़ राजनीतिज्ञ समान नागरिक संहिता की ओर नहीं बढ़ सके। जाहिर है कि जो लोग सत्ता में आते रहे उनमें कहीं कोई बुनियादी कमजोरी रही। यह बुनियादी कमजोरी इसलिए रही, क्योंकि सत्ता में बैठने वाले सत्तामोह से ग्रस्त बने रहे और उन्होंने सत्य को जानने और समझने से इनकार किया। मुस्लिम वोट बैंक के लिए देश को समान नागरिक संहिता से वंचित करना, निश्चित रूप से राष्ट्र के साथ किया जाने वाला विश्वासघात है। जो लोग ऐसा सोच रहे हैं कि समय के साथ मुस्लिम समाज बदल जाएगा वे सही नहीं सोच रहे हैं। मुस्लिम समाज तब बदलेगा जब उसे बदलने के लिए प्रेरित किया जाएगा। अगर इस समाज को मुल्लाओं और मौलवियों की गिरफ्त से बाहर नहीं निकाला गया तो यह समाज कभी नहीं बदल सकेगा। भारत के मुस्लिम समाज को बदलने के लिए कुछ वैसा ही करना होगा जैसा तुर्की में कमाल पाशा ने अथवा मिस्र में नासिर ने किया। आज विश्व में अनेक मुस्लिम बहुल राष्ट्रों में भी समान नागरिक संहिता लागू है। इन राष्ट्रों में अब शरीयत के कानूनों का नागरिक जीवन में कोई सीधा हस्तक्षेप नहीं है पर्दा प्रथा अथवा बहुपत्नीवाद अरब की संस्कृति का अंग है। यदि अरब के रीति-रिवाजों को अन्य राष्ट्रों में रहने वाले मुसलमानों पर थोपने की चेष्टा की जाती है तो इसका कोई औचित्य नहीं। इस चेष्टा का विरोध करना ही उचित है। जब तुर्की के नागरिकों पर अरब के रीति-रिवाजों को लादने की कोशिश की गई तो कमाल पाशा ने उनका विरोध किया और उन्हें पूरी तौर पर ठुकरा दिया। यही इंडोनेशिया में भी हुआ और चीन, रूस व मध्य ऐशिया के अनेक राष्ट्रों में भी। अजरबैजान, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान आदि मुस्लिम बहुल देशों में अरब के रीति-रिवाजों का कोई महत्त्व नहीं है। अब जब अनेक मुस्लिम बहुल राष्ट्रों में भी अरब की संस्कृति और वहां के रीति-रिवाजों को कोई महत्त्व नहीं प्राप्त है तब फिर वहां के रीति-रिवाजों को भारत की जनता पर थोपने की चेष्टा क्यों की जा रही है?

भारत में मुल्ला, मौलवी और मुस्लिम समाज के अन्य रूढ़िवादी नेता तथा कुछ राजनीतिज्ञ समान नागरिक संहिता जैसी प्रगतिशील विचारधारा का जो विरोध कर रहे हैं तथा जिस तरह अरब के रीति-रिवाजों को अत्यधिक महत्त्व दे रहे हैं वह अत्यधिक दुर्भाग्यपूर्ण है। जहां तक समान नागरिक संहिता लागू होने से देश के बिखर जाने की बात है, तो सच यह है कि इस संहिता केलागू होने से देश बिखरेगा नहीं, बल्कि और मजबूत होगा। समान नागरिक संहिता लागू होने से वे जंजीरें भी टूट जाएंगी जिनसे मुल्लाओं और मौलवियों ने भारत के मुस्लिम समाज को जकड़ रखा है। चूंकि जब ऐसा होगा तब मुल्लाओं और मौलवियों की दूकानें भी बंद हो जाएंगी इसलिए ही वे मुस्लिम समाज को रूढ़ियों की जंजीरों से जकड़े रखना चाहते हैं। दुर्भाग्य यह है कि मुस्लिम समाज यह सब कुछ समझने से इनकार कर रहा है। निश्चित रूप से इन जंजीरों को तोड़ना ही होगा, क्योंकि तभी मुस्लिम समाज प्रगति कर सकता है। समान नागरिक संहिता का अभाव मुस्लिम समाज की प्रगति में बाधक ही सिद्ध हो रहा है। भारत की जनता को भारत में जन्मे और यहां की आबोहवा से पोषित रीति-रिवाज चाहिएं। भारत की जनता को अरब के रीति-रिवाजों से कुछ लेना देना नहीं है। पता नहीं क्यों भारत के मुस्लिम समाज को यह बात समझ में नहीं आ रही है कि समान नागरिक संहिता उसे आगे बढ़ाने में ही सहायक होगी? भले ही आज सत्य को समझने से जानबूझकर इनकार किया जा रहा हो, लेकिन सत्य तो सत्य ही रहेगा। सत्य को कोई असत्य में नहीं बदल सकता-कोई सत्ता भी नहीं।

(दैनिक जागरण से साभार)

लोकसभा त्रिशंकु हुई तो क्या होगा?

❑ सुभाष काश्यप

प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष नरसिंह राव ने इधर बार-बार त्रिशंकु संसद की संभावना का खंडन किया है। उनका मानना है कि कांग्रेस ही एक ऐसा दल है जो देश को स्थायी सरकार दे सकता है। उन्हें पूरा विश्वास है कि देश की जनता ११वीं लोकसभा के लिए हो रहे आम चुनावों में उनके दल को पूर्ण बहुमत प्रदान करेगी और वह एक बार फिर सरकार बनाएंगे। प्रमुख विपक्षी दल भाजपा को भी पूर्ण विश्वास है कि उसे बहुमत मिलेगा और वही देश को स्थायी और प्रभावी सरकार देने में सफल हो सकती है।

आम चुनावों के परिप्रेक्ष्य में ऐसे दावे किया जाना कोई विशेष आश्चर्य की बात नहीं। सभी जानते हैं कि इन दावों पर स्वयं दावेदारों को भी विश्वास नहीं है और ये दावेदार यह जानते हैं कि १९९६ के इन चुनावों में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत मिलने की कोई आशा नहीं की जा सकती। मतों की गणित और अभी तक किए गए सभी सर्वेक्षण तथा विश्लेषण इसी ओर इंगित करते हैं। इस संदर्भ में जो एक प्रश्न दोहराया जा रहा है वह यह है कि यदि "त्रिशंकु संसद" बनी तो क्या होगा? सबसे पहली बात तो यह है कि इसे देश का दुर्भाग्य ही मानना चाहिए कि प्रधानमंत्री पद पर आसीन व्यक्ति भी "त्रिशंकु संसद" अथवा 'हंग पार्लियामेंट' जैसी भ्रामक और असंगत शब्दावलि का प्रयोग करे। संविधान के अनुच्छेद ७९ के अनुसार "संसद राष्ट्रपति और दोनों सदनों से मिलकर बनेगी, जिसके नाम राज्यसभा और लोकसभा होंगे।" स्पष्ट है कि जो आम चुनाव हो रहे हैं वे केवल लोकसभा के लिए हो रहे हैं, राष्ट्रपति अथवा राज्यसभा के लिए नहीं। चुनावों का प्रभाव संसद के एक सदन केवल लोकसभा पर ही पड़ेगा, अतः जब लोग "त्रिशंकु संसद" की बात करते हैं तो उनका अभिप्राय केवल लोकसभा से होता है, संसद से नहीं।

तकनीकी दृष्टि से जांच करने पर पता चलेगा कि "त्रिशंकु लोकसभा" की संज्ञा केवल तभी सार्थक होगी, जब निर्वाचन परिणाम आने के बाद और नए सदन का गठन हो जाने पर कोई भी सरकार बन ही न सके। लगता है हमारे यहां "हंग" अथवा "त्रिशंकु" सदन की संकल्पना को अभी ठीक से समझा ही नहीं गया। किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला तो सदन को "त्रिशंकु" नहीं कहा जा सकता। दरअसल, प्रश्न केवल यह पूछा जाना चाहिए कि किसी एक दल को बहुमत न मिलने की स्थिति में सरकार बनाने की संभावनाएं क्या हैं? वस्तुस्थिति यह है कि ऐसा होना कोई विशेष समस्या पैदा नहीं करता। हमारे संविधान में ऐसी किसी भी समस्या से निबटने की पर्याप्त सामर्थ्य है, समुचित प्रावधान है। किसी एक दल को पूर्ण अथवा स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होने की स्थिति में न तो भारत के लिए अद्भुत है और न ही अन्य संसदीय लोकतांत्रिक देशों के लिए अनहोनी। हमारे यहां संघ तथा राज्यों के स्तर पर ऐसी स्थिति पहले भी कितनी ही बार आ चुकी है। कभी कोई पहाड़ नहीं गिरा, कोई आसमान नहीं टूटा। आजकल नरसिंह राव कांग्रेस की जो सरकार चला रहे हैं उसने भी १९९१ के दसवें आम चुनावों में बहुमत प्राप्त नहीं किया था और जिन अर्थों में "त्रिशंकु" शब्द का आजकल प्रयोग किया जा रहा है उसके अनुसार दसवीं अर्थात् वर्तमान लोकसभा को भी "त्रिशंकु" कहा जा सकता था।

यूरोप तथा संसार के दूसरे भागों में जहां संसदीय लोकतंत्र है वहां एक दल की अल्पमत सरकारें अथवा एक से अधिक दलों की मिली-जुली सांझा सरकारें प्रायः बनती रहती हैं और यह भी जरूरी नहीं कि वे स्थायी अथवा प्रभावी न सिद्ध हुई हों। यह दूसरी बात है कि हमारे यहां, विशेषकर केन्द्रीय स्तर पर ऐसी सरकारों का इतिहास और अनुभव अधिक सुखद नहीं रहा। मोरारजी देसाई, चरण सिंह, विश्वनाथ प्रताप सिंह और चन्द्रशेखर की सरकारें अधिक नहीं चल पाईं और नरसिंह राव ने अपनी अल्पमत सरकार को जिस तरह बहुमत में बदला वह हमारे लोकतांत्रिक इतिहास का सबसे शर्मनाक प्रकरण माना जाएगा। और भी दुख की बात यह है कि आज भी जहां एक ओर कांग्रेस अध्यक्ष नरसिंह राव बहुमत पाने और स्पष्ट जनादेश मिलने का दावा कर रहे हैं वहीं उन्हीं के दल के महासचिव यह घोषणा भी कर रहे हैं कि यदि कांग्रेस को बहुमत नहीं भी मिला तो भी सरकार नरसिंह राव ही बनाएंगे। स्पष्ट है कि उन्होंने पहले से ही मन बना लिया है कि जनादेश उनके लिए कोई अर्थ नहीं रखता। उनका काम

तो चुनाव परिणाम आने के बाद प्रारम्भ होगा और जो भी फुटकर सांसद चुनकर आएंगे उन्हें मुंह मांगे दाम देकर खरीदने की शक्ति, जो उन्होंने जुटाकर सुरक्षित रखी है वह तो और किसी दल के पास नहीं। निर्वाचत आयोग ने चुनावी खर्चों पर सख्त नियंत्रण करके भी जाने-अनजाने में इस प्रक्रिया में भारी मदद की है क्योंकि चुनावों के बाद सांसद के क्रय-विक्रय पर तो कोई नियम कानून लागू होना संभव नहीं दीखता।

दुर्भाग्यवश हमारे देश में आज तक एक सुगठित राजनीतिक दल व्यवस्था का विकास नहीं हो पाया है। यह संसदीय लोकतंत्र की सफलता के मार्ग में एक बड़ी बाधा है। हमारे यहां ब्रिटेन जैसी द्विदलीय व्यवस्था नहीं जन्मी-पनपी। हमारे देश में छोटे-बड़े सैकड़ों दल हैं कुछ क्षेत्रीय, कुछ प्रांतीय और कुछ राष्ट्रीय और वह भी स्थायी नहीं हैं। वे बदलते, विखरते, जुड़ते, बनते विगड़ते रहते हैं। प्रायः प्रमुख दलों में सैद्धान्तिक अथवा कार्यक्रमात्मक मतभेद कम हैं व्यक्तिपरक और सत्ता में अधिकाधिक हिस्सा पाने के लिए संघर्ष अधिक। समस्या को एक और दृष्टि से देखा जा सकता है। जिस निर्वाचन व्यवस्था को हमने अपनाया, जिसके कारण जन प्रतिनिधि चुने जाते हैं और जनादेश का निर्णय होता है और इस बार भी होगा, उस व्यवस्था में किसी भी प्रत्याशी के लिए अपने निर्वाचन क्षेत्र में जनादेश प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि उसे मतों का बहुमत प्राप्त हो। यदि उसे और सभी प्रत्याशियों से अधिक मत मिल जाएं तो सफल घोषित कर दिया जाता है और जनादेश प्राप्त प्रतिनिधि मान लिया जाता है। गत आम चुनाव में जितने प्रतिनिधि चुने गए उनमें से अधिकांश को डाले गए मतों का भी अल्पमत ही प्राप्त हुआ था अर्थात् उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध पड़ने वाले मत उसके पक्ष में पड़ने वाले मतों से अधिक थे। अनेक लोकसभा सदस्य मात्र २०, २५ या ३० प्रतिशत मत प्राप्त कर आए थे। लोकसभा में मंत्रिमंडल के चयन का या सरकार बनाने का अधिकार किस दल को मिले, इसका निर्णय भी यदि इसी निर्वाचन पद्धति के नियमों के अनुसार किया जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि जिस दल को सबसे अधिक स्थान मिले हों उसे ही जनादेश मिला माना जाना चाहिए और उसकी सरकार बननी चाहिए। भले ही उसे मिले कुछ स्थानों की संख्या सदन की पूरी सदस्यता के आधे से अधिक न हो। हमारी निर्वाचन व्यवस्था में तर्क का तकाजा नहीं है कि किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने का यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि जनता ने किसी को जनादेश नहीं दिया अथवा लोकसभा "त्रिशंकु" हो गई।

कुछ दल विशेष कर सत्ताधारी कांग्रेस "त्रिशंकु" सदन का भयावह हौवा दिखाकर और स्थिरता का नारा लगाकर अपना उल्लू सीधा करना चाहती है। जहां तक संविधान का प्रश्न है, स्थिति नितान्त स्पष्ट है। अनुच्छेद ७५ के अन्तर्गत प्रधानमंत्री को नियुक्त करने की शक्ति राष्ट्रपति को दी गई है। यद्यपि संशोधित अनुच्छेद ७४ के अनुसार राष्ट्रपति के लिये जरूरी है कि वह अपने सभी कृत्यों के निर्वाह के मामले में मंत्रिपरिषद के परामर्श के अनुसार कार्य करे, फिर भी प्रधानमंत्री की नियुक्ति एक ऐसा मामला है जिसके लिये मंत्रिपरिषद का परामर्श न तो मांगा जा सकता है औन न ही उसका कोई औचित्य समझ में आता है। यह बात तो कदापि नहीं सोची जा सकती कि नए प्रधानमंत्री की नियुक्ति पद मुक्त हो रहे प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली तथा स्वयं पदमुक्त हो रही मंत्रिपरिषद के परामर्श से की जाए। मंत्रिपरिषद् के अन्य मंत्रियों की नियुक्ति के बारे में अनुच्छेद ७५ में ही स्पष्ट कर दिया गया है कि वे नए प्रधानमंत्री के परामर्श पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाएंगे।

वह चाहे या न चाहे, इस बात का निर्णय स्वयं राष्ट्रपति को अपने व्यक्तिगत विवेक से करना होगा कि किस व्यक्ति को अथवा किस दल के नेता को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करें। उन्हें देखना होगा कि किस व्यक्ति को और किस दल को सबसे अधिक जनादेश मिला है और किसे लोकसभा के सदस्यों के बहुमत का समर्थन मिलने की आशा की जा सकती है, क्योंकि संविधान के अनुच्छेद ७५ (३) के अन्तर्गत मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है, यह आवश्यक है कि उसे लोकसभा का विश्वास प्राप्त हो।

हमारी संविधान व्यवस्था और जनादेश जानने की निर्वाचन पद्धति के परिप्रेक्ष्य में इसमें दो राय होने का कोई औचित्य नहीं हो सकता कि राष्ट्रपति को चाहिए कि सर्वप्रथम लोकसभा में सबसे बड़े दल के नेता को सरकार बनाने के लिये आमंत्रित करें ओर प्रधानमंत्री नियुक्त करें। अगर वह सरकार बना सकने में अपनी असमर्थता प्रकट करे तो राष्ट्रपति दूसरे नम्बर के बड़े दल के नेता को अवसर दे

सकते हैं। प्रायः ऐसी संभावना नहीं हो सकती कि सत्ता सुख बांटने की लालसा और प्रलोभन सदस्यों का एक बहुमत जोड़ने में असफल रहे। सत्ता भोग के नशे में जोड़ने की असीम शक्ति है फिर भी यदि राष्ट्रपति को ऐसे व्यक्ति का चयन करना दुष्कर दिखाई दे जो स्थायी सरकार बना सके तो राष्ट्रपति अनुच्छेद ८६ के अधीन लोकसभा को यह संदेश भेज सकते हैं कि वह जिस तरह अध्यक्ष का निर्वाचन करती है वैसे ही सदन के नेता का निर्वाचन करे और जिस व्यक्ति को ५० प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हों उसका नाम राष्ट्रपति के पास भेज दे ताकि उसी को वह प्रधानमंत्री पद पर नियुक्त कर दें। मंत्रिपरिषद् के अन्य मंत्री इस प्रधानमंत्री के परामर्श पर नियुक्त हो जाएंगे।

यह सच है कि सब प्रकार के जोड़-तोड़, मोलभाव, सांसदों के क्रय-विक्रय आदि का सिलसिला समाप्त नहीं हो जाएगा। यह भी संभव है कि सबसे बड़ा दल कुछ बिकाऊ दलबदलुओं को अपनी ओर आकृष्ट कर नरसिंह राव शैली में बहुमत में आ जाये अथवा कुछ छोटे-छोटे दलों के साथ सत्ता में भागीदारी के आधार पर किसी तरह की कोई सांठगांठ कर ले, किन्तु साथ ही इस बात की संभावना भी हो सकती है कि अधिकांश या सभी अन्य दल सबसे बड़े दल के विरुद्ध एकजुट हो जाएं। चाहे जो भी हो, महत्त्वपूर्ण बात यह है कि राष्ट्रपतिका पद किसी नेता को समर्थन देने वाले सदस्यों के बहुमत का, सदन के बाहर निर्धारण करने या राष्ट्रीय सरकार, सर्वम्मत सरकार, सर्वदलीय अथवा निर्दलीय सरकार जैसी अनर्गल युक्तियों का सहारा लेने की अत्यन्त विवादास्पद भूमिका से बचा रहे। यदि प्रश्न केवल बहुमत के निर्धारण का है तो सदन के अंदर मतदान द्वारा निर्णय सबसे सीधा और संवैधानिक तरीका होगा। व्यवहार में इसका प्रभाव यह भी होगा कि "सरकारिया कमीशन" ने तथा बोमई वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने मंत्रिपरिषद् में विश्वा-अविश्वास का निर्णय करने के लिए जो बात कही है वही प्रधानमंत्री की नियुक्ति पर भी लागू जो जाएगी। इसके लिये न तो संविधान में किसी संशोधन की आवश्यकता है और न किसी नये कानून या नियम की।

आगे भी इस प्रकार नियुक्त सरकार की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए और यह देखने के लिए कि उसे अपने को सत्ता में बनाए रखने के लिए संघर्ष में ही सदैव न लगे रहना पड़े, एक यह भी सुझाव दिया जा सकता है कि सदन में मंत्रिपरिषद् के प्रति अविश्वास प्रस्ताव पेश करने की प्रक्रिया का निर्धारण करने वाले नियम १९८ में यह मामूली सा संशोधन कर दिया जाए कि वर्तमान मंत्री परिषद में अविश्वास प्रकट करने के साथ-साथ नए नेता अथवा प्रस्तावित प्रधानमंत्री का नाम भी दिया जाए ताकि यदि प्रस्ताव पारित हो जाए तो साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाए कि सत्ता की बागडोर किसके हाथों में दी जानी है अथवा नयी मंत्रिपरिषद् का मुखिया राष्ट्रपति किस व्यक्ति को नियुक्त करे। वस्तुतः ऐसा करने से हमारी व्यवस्था में अनायास ही जर्मनी की रचनात्मक अविश्वास की युक्ति सम्मिलित हो जाएगी।

यदि सचमुच लोकसभा "त्रिशंकु" हो जाती है और कोई सरकार बन ही नहीं पाती तो राष्ट्रपति को विवश होकर लोकसभा का विघटन करना पड़ेगा और जनता से ताजा निर्वाचन के द्वारा अपना जनादेश स्पष्ट करने की अपील करनी पड़ेगी। यहां यह कहना आवश्यक है कि जबकि लोकसभा के लिए पांच वर्ष की एक नियत कालावधि है, मंत्रिपरिषद के लिए ऐसी कोई सीमा निर्धारित नहीं है। देखना यह होगा कि "त्रिशंकु" लोकसभा की आड़ में वर्तमान सरकार ही कहीं सत्ता में कुछ और माह बने रहने का षड्यंत्र न रच ले। यदि ऐसी स्थिति आती है तो राष्ट्रपति को एक अस्थायी काम चलाऊ सरकार, बंगलादेश की तरह नियुक्त कर देनी चाहिए और इस सरकार का काम कम से कम समयावधि में निष्पक्ष चुनाव कराना मात्र होना चाहिए।

सत्य झूठ में . . .

यह कैसी धरती है बाबा, इस का कैसा खेल है।
झूठ सत्य पर राज्य कर रहा, अमृत विष का मेल है।
प्राणों में पीड़ा रोती देखी, पाखण्डों को बढ़ते देखा।
धर्म लक्ष्य के लिए जिए जो, उनको जग में सड़ते देखा।
आज राष्ट्र की पीड़ा को भी, भुना रहे हैं व्यापारी।
धर्मध्वजी नेतागण सारे, बने हुए अज्ञान पुजारी।

किसे बताऊँ सत्य झूठ में, सत्य जान कर चलना सीखो।
पाप-पुण्य को एक तराजू, में मत तोलो, जीना सीखो।
कांप रही है ध्वजा हमारी, केवल झूठ प्रचार से।
विजय वरण है इष्ट जिन्हें भी, चलना सीखें प्यार से,
सत्य सुधा अभिसार से।

—राकेश रानी

आपके पत्र

ब्रिटेन में गौओं पर संकट

आदरणीय सम्पादिका जी,

ब्रिटेन में एक करोड़ दस लाख गायों को सामूहिक रूप से काटने की योजना ब्रिटिश सरकार की है। इस प्रकार की सूचना अनेक समाचार पत्रों द्वारा ज्ञात हुई है। सभी गौ भक्त संगठनों से यह अपील है कि अपनी संस्था द्वारा और व्यक्तिगत रूप से भी भारत के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, विदेशमंत्री और नई दिल्ली स्थित ब्रिटेन के राजदूत तथा ब्रिटेन में भारत के राजदूत डॉल लक्ष्मीमल सिंघवी को तार, चिट्ठी अथवा फैक्स द्वारा विरोध प्रकट करने की कृपा करें। आपके यत्न से सम्भवतः मूक प्राणियों के प्राणों की रक्षा हो सकेगी। हमारा ब्रिटिश सरकार को सुझाव है कि बीमार गऊओं का इलाज कराया जाए।

प्रेमचन्द गुप्ता, अध्यक्ष, भारत गो सेवक समाज

प्रेरक पत्रिका 'जनज्ञान'

आपके सम्पादन में 'जनज्ञान' पत्रिका का प्रकाशन बहुत ही सुन्दर, आकर्षक तथा मार्ग दर्शक लेखों से पूर्ण हो रहा है। सभी लेख शिक्षाप्रद व महत्त्वपूर्ण सामग्री से भरपूर हैं आपकी पत्रिका ही एक मात्र आशादीप है। बहिन जी, जनज्ञान पत्रिका की बहुत उत्सुकता से प्रतीक्षा रहती है।

आपका बाबूराम सिंह, सुगर मिल, मारोली गुजरात

विस्तृत जानकारी देने वाली पत्रिका

आदरणीय माता जी! चरणस्पर्श,

ईश्वर आपको दीर्घायु प्रदान करें व आप इसी प्रकार वैदिक प्रचार प्रसार में तन-मन धन से लगी रहें आपके हम सभी आर्य परिवार साथ हैं। जनज्ञान का मैं कई वर्षों से नियमित पठन कर रहा हूं इसमें सर्वांगीण ज्ञान प्राप्त होता है। यह पत्रिका आधुनिक व भविष्य तीनों कालों की जानकारी देती है तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारियां वैदिक जानकारियां, शहीदों की कुर्बानियां आदि का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। मुझे आजीवन जनज्ञान भेजते रहें आपका आभारी हूं और रहूंगा। यही विनय। **डोलूराम तुलसीराम आर्य, मंत्री आर्य समाज नान्द्रा, खरगौन**

सर्वोत्तम जनज्ञान

सम्पादक जी, सादर नमस्ते।

जनज्ञान पढ़ा सचमुच में जन-जन को ज्ञान (प्रकाश) देने वाली आपकी ये पत्रिका है। परम पिता से हम कामना करते हैं कि ऐसी विदुषी यदि और मेरे आर्यावर्त्त में हो जायं तो मेरे देश का उद्धार हो जाय। सबसे उत्तम जनज्ञान है जो भी पढ़ता है सभी को उसका सचमुच में ज्ञान मिलता है। मैं जनज्ञान पत्रिका के लिये बहुत दिनों से व्याकुल था सोमनाथ के यहां से एक प्रति पुराना मिला उसी पते से आपको भेजा था फिर दूसरे ग्राहक जमनापुर पीरी बाजार से बनाकर भेजने वाला हूं। **बिभीषण वानप्रस्थी, खगड़िया, बिहार**

ज्ञानवर्धक लेख

आदरणीय सम्पादक,

फरवरी मास का जनज्ञान प्राप्त हुआ। उसमें पृष्ठ २७ पर "भूकम्प और कत्लखाने" नामक लेख प्रकाशित किया गया है। यह लेख निश्चय ही क्रान्तिकारी शोध के अन्तर्गत है। विदित हो कि लंदन सरकार ने आज दैनिक में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार ४७ लाख गायों को पागल करार देकर उनके सामूहिक हत्या का उपाय कर रही है। विश्व हिन्दू परिषद ने अपनी स्थानीय शाखा को आदेश दिया है कि उन गायों को अपने संरक्षण में लेकर उनका योगक्षेम करें। आर्य समाज को भी इस दिशा में तुरन्त प्रयास करना चाहिए। **मक्खन लाल आर्य, मंत्री, आ०स० बड़हलगंज**

सात समुद्र पार से गुड़ियों के बाजार से ....

मार्च मास की जनज्ञान पत्रिका में पुत्री द्वारा पिता के प्रति हृदयोदगार पढ़कर मेरी आंखें नम हो गई साथ ही विचारों की साम्यता देखकर एक आत्मीय लगाव ऋचा जी से हो गया और पत्र लिखने बैठ गई। आज से करीब १५ वर्ष पूर्व मेरे पिताजी का स्थानान्तरण श्री गंगानगर से बाड़मेर (चोहटन त०) में हुआ था तब मैं मात्र १६ वर्ष की थी। मैंने इन पंक्तियों को पत्र में कुछ इस प्रकार लिखा था

पांच जिलों के पार से, चौहटन के बाजार से
अच्छी सी चीजें लाना चीजें चाहे ना लाना
पापा जल्दी आ जाना .....

उस समय तो उन्होंने ये पंक्तियां पढ़ी और वे आ गये लेकिन अब तो मुझे ये पंक्तियां अर्थहीन सी मालूम पड़ती हैं क्योंकि अब वे इस दुनिया में नहीं रहे।

वेदभिक्षु जी का राष्ट्र के प्रति लगाव और समर्पण पढ़कर मन श्रद्धा से झुक जाता है उनकी वेदों के प्रति आस्था और राष्ट्रउत्थान के लिए किया गया प्रयास एक महान् कार्य है। उनके जाने से जो रिक्तता आई है उसकी पूर्ति असम्भव है। ऐसी महान् विभूति को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि!

वैदिक-चिन्तन

ईशोपासना क्यों करें?

❑ जयप्रकाश शर्मा

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्नासुवः॥

इस बात को सभी मानेंगे कि मनुष्य किसी भी कार्य को बिना प्रयोजन शुरू नहीं करता। बुद्धिमान पुरुष तो सदैव पूर्ण विचार करने के उपरान्त ही कार्य आरम्भ करता है। यह विचारणीय है कि ईश उपासना क्यों करनी चाहिये। विशेष कर उन लोगों को जो कर्म की फिलासफी के मानने वाले हैं जो यह मानते हैं कि ईश्वर कर्मों का फल देता है और कर्मों के अनुसार ही मानव का प्रारब्ध होता है या बनता है। इस मसले को स्पष्ट करने के लिये इस बात पर विचार कर लिया जाये कि ईश्वर की उपासना की क्या आवश्यकता है तथा उसे करने से कर्मों के फल पाने में कुछ लाभ होगा या नहीं। उपासना दो शब्दों से मिलकर बना है। यथा उप+ आसन। ईश्वर ऐसी शक्ति का नाम है जो सत्य+चित्त+आनन्द है (सच्चिदानन्द) उसके निकट बैठना उपासना का तात्पर्य है। प्रश्न उठता है कि ईश्वर हमसे दूर है और हमें उसके निकट बैठना चाहिये अर्थात् उपासना करनी चाहिये। दूरी का आधार निम्नलिखित दशाओं पर निर्भर करता है :

१. स्थान सम्बन्धी दूरी, २. काल सम्बन्धी दूरी या ३. ज्ञान सम्बन्धी दूरी।

देखना यह है कि ईश्वर और मानव में किस प्रकार की दूरी है क्योंकि उपासना शब्द से यह बोध होता है कि किसी न किसी प्रकार की दूरी अवश्य है जिसे दूर करने के लिये उपासना करनी आवश्यक है। कुछ लोग ईश्वर और मानव में देश (स्थान) की दूरी समझते हैं या बताते हैं। ऐसे ही लोगों ने ईश्वर के किसी स्थान विशेष को नियत कर दिया है या मान लिया है। परन्तु बुद्धिमान पुरुष ईश्वर को परिमित (महदूद) नहीं मान सकता क्योंकि महदूद की शक्ति भी महदूद ही होगी। इसलिये उपरिमित के साथ स्थान या देश की दूरी तो हो ही नहीं सकती। **"जर्रे-जर्रे नुमायां है तस्वीर मेरे यार की"** क्योंकि वह तो सर्वव्यापक और सर्वाधार है। यदि काल की दूरी मान लें तो वह भी नहीं हो सकती क्योंकि समय (काल) का भेद अनित्य पदार्थों में ही होता है। परमात्मा और जीवात्मा दोनों नित्य हैं। इनमें काल का अन्तर अर्थात् दूरी नहीं हो सकती।

अब रही ज्ञान की दूरी। यह मानना बुद्धिगम्य है कि हर एक मनुष्य ईश्वर के ज्ञान से पूर्ण परिचय नहीं रखता। अतः यह स्पष्ट हुआ कि ज्ञान कृत दूरी है। अतः ईश्वर के ज्ञान को प्राप्त करना ही उसकी उपासना द्वारा अभिप्सित है या प्रयोज्य है।

यह भी सोचना चाहिये कि दुनिया में उपासना किसकी और क्यों की जाती है। देखने में आता है कि आदमी को जब सर्दी सताती है तब वह उससे मुक्ति पाने के लिये अग्नि और वस्त्र की उपासना करता है अर्थात् उनके निकट जाता है या बैठता है। जब गर्मी सताती है तब वह जल, ठंडा स्थान व ठंडी वायु की उपासना करता है। स्पष्ट है कि किसी वस्तु की उपासना से कष्ट पहुंचता है तब उससे प्रतिकूल शक्ति या वस्तु की उपासना करते हैं। इस प्रकार उपासना दुःख से बचने और सुख को प्राप्त करने के लिये की जाती है। अस्तु यह विचारणीय है कि हमें दुख किस-किस वस्तु से प्राप्त होता है ताकि हम उसके प्रतिकूल शक्ति की उपासना करें जिससे दुख दूर हों। जब हम संसार की वस्तुओं की ओर देखते हैं तो उनमें बहुत सी शक्तियों के होते हुए भी केवल दो शक्तियों से हमारा सम्बन्ध है। एक तो ज्ञात शक्ति है और दूसरी अज्ञात शक्ति है। जिन वस्तुओं का हम इन्द्रियों से अनुभव करते हैं वह सब की सब ज्ञात तथा इनके अतिरिक्त शेष अज्ञात। इन ज्ञात शक्तियों के समूह को 'प्रकृति' के नाम से पुकारते हैं और जितनी इच्छायें हैं वे सब उत्पन्न कर कष्ट का कारण बनती हैं। इच्छायें प्रकृति जन्य वस्तुओं की होती है जिनकी प्राप्ति पर सुख और न प्राप्त होने पर दुख या कष्ट होने या छिन जाने पर दुख अर्थात् संयोग सुख और वियोग दुख का कारण हो जाती हैं। हम प्रकृति की उपासना करने के कारण ही सुख-दुख के चक्कर में पड़ जाते हैं। प्रकृति जन्य पदार्थ प्राप्त करने की इच्छा, सफलता, असफलता वास्तव में इसकी उपासना का निरर्थक प्रयास है क्योंकि

प्रकृति जड़ है उसमें चेतना का प्रस्फुरण किसी अन्य शक्ति का कार्य है जिसके सहारे यह परिवर्तन, परिवर्धन या विलुप्त होने की दशा को प्राप्त होती है।

प्रकृति की जड़ता तो सिद्ध है उसकी सम्पूर्ण दशा का ज्ञान उपार्जन हेतु अन्वेषण किये जा रहे हैं किन्तु फिर भी पूर्णता प्राप्त हुई हो ऐसी स्थिति नहीं है। प्रकृति की जड़ता और उसके विरुद्ध शक्ति के न जानने से संसार में हमें दुःख हो रहा है। अतः ऐसी शक्ति को जानने का प्रयत्न करें जो प्रकृति से उत्पन्न हुए दुखों को दूर करे।

प्रकृति की दशाओं पर ध्यान दें तो पाते हैं कि प्रकृति सर्वव्यापक परिणामिनी और जड़ है। अतः प्रकृति की दशा से वही परिचित हो सकता है जो सर्वव्यापक और चेतन (ज्ञान) हो। जीवात्मा तो सर्वव्यापक है ही नहीं, हां चेतन (अल्पज्ञ) जरूर है। अतः सर्वव्यापक ज्ञाता एक परमात्मा ही है उसी के प्रकृति का यथार्थ और जीवात्मा का प्रकृति का यथार्थ ज्ञान उसी से प्राप्त हो सकता है। दूसरे, जीव सुख, दुःख सहित और परमात्मा आनन्द स्वरूप है। अतः दुःख का कारण या आधार प्रकृति के अतिरिक्त कौन हो सकता है? जीवात्मा दुःख छोड़ना चाहता है और दुःख प्रकृति के संसर्ग से पैदा होता है। प्रकृति के व्यापक और नित्य होने से जीवात्मा का प्रकृति से सम्बन्ध रहता है जिससे दुःख का प्रादुर्भाव होना स्वाभाविक है। दुःख स्वरूप (तमयुक्त) प्रकृति के विरुद्ध परमात्मा आनन्दमय है जिसकी उपासना से जीव दुख से छूट जाता है। इसी कारण जीव को परमात्मा की उपासना करनी और उसी को जानना है।

अब प्रश्न उठता है कि जब एक बार परमात्मा को जान लिया और उससे काल या स्थान की दूरी भी नहीं है तो बार-बार उपासना की क्या आवश्यकता है। उत्तर के लिये पुनः विचार करें कि सर्दी दूर करने के लिये अग्नि या कपड़ों के प्रयोग से सर्दी से छुटकारा हो गया तो हम अब अग्नि या कपड़ों को दूर फेंक दें? पुनः सर्दी लगेगी ही, तब पुनः वही क्रिया करनी होगी, तभी राहत मिलेगी। इसी प्रकार जीवात्मा प्रतिदिन सांसारिक कार्यों की वा प्रकृति का सेवन करने को बाध्य है क्योंकि यह शरीर का धर्म है। प्रकृति की उपासना करते समय सुख या दुख प्राप्त होगा ही। अतः पुनः-पुनः परमात्मा की उपासना आवश्यक हो जाती है तथा इससे दुखों से त्राण मिलता है। परमात्मा की कृपा से एक समय ऐसा भी होता है कि दुख की निवृत्ति बिना ईशोपासना हो जाती है जैसे :-

१. सुषुप्ति—स्वल्पकालिक। २. मृत्यु—कुछ लम्बे समय के लिये। ३. मुक्ति—स्थाई।

मनुष्य के पास बाह्य ज्ञान प्राप्त करने के लिये साधन है। मन, बुद्धि, इन्द्रियां जो कार्य लिप्त निरन्तर रहने के कारण बाह्य सम्बन्धों के कारण दुःख उठाते हैं और थक जाते हैं। थक कर अपना कार्य छोड़ देते हैं। उनके काम करना छोड़ने से जीवात्मा का प्रकृति से सम्बन्ध छूट जाता है। ऐसी अवस्था सुषुप्ति अवस्था में प्राप्त होती है। किन्तु जीवात्मा की यह साध रहती है कि किसी वस्तु की उपासना ज्ञान व प्रयत्न द्वारा करता रहे। इस कारण प्रकृति की उपासना के साधनों के न होने पर वह अन्दर की ओर अन्तर्मन की सहायता से परमात्मा की उपासना आरम्भ करता है परन्तु जिनको परमात्मा का ज्ञान नहीं होता या उस राह के राही नहीं हैं और मनमाना व्यवहार करते रहते हैं उन्हें स्वप्न में अन्तर्मन द्वारा प्रकृति जन्य कार्यों में लिप्त रहना पड़ता है तथा यथेष सुख अनुभव नहीं होता। इन्द्रियों को क्या आवश्यकता है कि वे आत्मा को परमात्मा से हटाकर प्रकृति की ओर लगायें। आनन्द सुषुप्ति आदि दशाओं में प्राप्त होता है वह इन्द्रियों को अनुभव नहीं होगा। वह उनका विषय ही नहीं है।

इन्द्रियों की पहुंच तो उनके विषयों तक सीमित है। जिस प्रकार संसार में बहुत से दलाल या कपटी सच्चे व्यापारी को झूठी दुकान पर ले जाते हैं। कभी सही या सच्ची दुकान पर नहीं ले जाते क्योंकि सच्ची दुकान से उन्हें दलाली मिलने से रही। वे व्यापारी की हानि की परवाह न कर झूठी दुकान पर ही ले जाते हैं। ऐसे ही आत्मा की हानि (दुःख) को जानते हुए भी मन और इन्द्रियां जीवात्मा को प्रकृति के विषयों में ही लगाना चाहते हैं। मनके इस प्रयत्न को रोकना ही परमात्मा की निकटता का मार्ग है। कपिल मुनि ने सांख्य दर्शन में कहा भी है :

"समाधिसुषुप्ति मोक्षेषु ब्रह्मरूपता" अ० ५/११६

अर्थात् ब्रह्म सच्चिदानन्द है जीव सत्‌चित् है और जीव को तीन दशाओं में ब्रह्म के सम्बन्ध से आनन्द की प्राप्ति होती है। वह तीन दशाएं समाधि, सुषुप्ति और मोक्ष वर्णन की गई हैं। जब जीव को आनन्द प्राप्त हो जाता है तो जीव ब्रह्मानन्द में लीन हो जाता है किन्तु ब्रह्म से भेद रहता

है या नहीं यह प्रश्न स्वतः प्रस्फुटित होता है। आनन्द ब्रह्म का स्वाभाविक गुण है, और जीव का नैमित्तिक अर्थात् ब्रह्मोपासना से प्राप्त होता है जैसे गर्मी के दिनों में वायु में गर्मी आ जाती है। गरम स्पर्श वाली वायु स्वयं अग्नि नहीं हो जाती। इसी भांति ब्रह्म की उपासना से जीव आनन्द प्राप्त कर लेता है पर जीव ब्रह्म नहीं हो जाता।

ऊपर तीन अवस्थाओं की चर्चा की गई थी यथा १. सुषुप्ति २. मृत्यु ३. मोक्ष — वास्तव में मृत्यु और मोक्ष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मृत्यु होने पर पुनः जन्म लेना। यही क्रम चलते रहने पर जीवन मृत्यु का चक्र चलता रहता है किन्तु मोक्ष मृत्यु उपरान्त उपरोक्त चक्र में न पड़ना स्थायित्व लिये है। कपित मुनि ने भी तीन स्थितियों का वर्णन किया है :-

समाधि, सुषुप्ति, मोक्ष। सुषुप्ति— इन्द्रिय जन्यफल है जो प्रकृति की उपासना से प्राप्त हुआ। मोक्ष— आत्मा तथा परमात्मा के मिलन से हुआ। समाधि— आत्मा का अन्तर्मुखी होना तथा ईश्वर दर्शन करना। किन्तु तीनों अवस्थाओं में इन्द्रियां, जो प्रकृति उपासना में दक्ष हैं क्रियाकलाप पर रोक का काम करना है। सुषुप्ति का फल जागने पर पुनः प्रकृति की उपासना है। मोक्ष नव सृष्टि तक विश्राम है तथा समाधि उपरान्त प्रकृति की उपासना नहीं अपितु प्रकृति का मोक्ष शरीर धर्म पालनार्थ यथेषु है।

आप नित्य स्नान करते हैं। शरीर का मैल या वस्त्रों का मैल छुड़ाने के लिये प्रतिदिन या बार-बार प्रयत्न करते हैं क्योंकि संसार में प्राकृतिक मैल तो है ही जो अनायास बार-बार लगता रहता है। इसी प्रकार जीवात्मा प्रकृति के सम्बन्ध से सदैव अज्ञानता और पाप के मैल को प्राप्त करता है। इसी कारण बुद्धिमान पुरुष इस प्रकृति से उत्पन्न मैल को दूर करने के लिये परमात्मा की उपासना बार-बार करता है। इसका यह कर्त्तव्य है जिससे यह मैल जमने न पाये। जिस प्रकार निरन्तर लम्बी अवधि तक स्नान न करने या वस्त्रों को न धोने से मैल जम जाता है तब उसे हटाने में कठिनाई होगी। हो सकता है सम्भव ही न रहे। यह नियम है कि वस्त्र बिनाप्रयत्न मैला हो जाता है परन्तु उसको शुद्ध (साफ) करने के लिये परिश्रम करना पड़ता है। इसी प्रकार प्रकृति संसर्ग से विषयों में लिप्त होने रूपी मैल स्वयं चढ़ता रहता है जिससे जीव को सदा दुःख ही होता है। इस दुःख से छूटने के लियें जीवन को पुरुषार्थ करकेपरमात्मा की उपासना करनी पड़ेगी। ❑

राष्ट्र रक्षार्थ कुछ सुझाव

सम्पादक जी

परिवार नियोजन का कानून सभी पर समानता से लागू किया जाये। देश के सभी नागरिकों के लिए **समान नागरिक संहिता** लागू की जाये। यदि कोई ऐसे कानूनों को अपने व्यक्तिगत कानून में बाधा मानते हैं और देश के टुकड़े-टुकड़े करने की धमकी देते हैं, तो उन्हें यह बात सख्ती से समझानी होगी कि इस बार देश को टूटने नहीं दिया जायेगा, काश्मीर को कटने नहीं दिया जायेगा।

शिक्षा का भारतीयकरण किया जाये, सभी नागरिकों के लिए **समान शिक्षा पद्धति** हो। सभी विद्यालयों में **समान शिक्षा शुल्क** हो, जिससे सभी नागरिकों को उन्नति का समान अवसर मिल सके। पब्लिक स्कूल पद्धति को समाप्त किया जाये।

सेक्युलरपंथियों ने देश में **ढाई करोड़ बंगलादेशी घुसपैठियों** का आयात किया ये विदेशी नागरिक हैं। देश के दुश्मन हैं। इन्हें सेक्युलरपंथियों ने अपना वोट बैंक बनाया है। यह देश की सुरक्षा के लिए खतरा है। इनका मताधिकार समाप्त किया जाये। तथा युद्ध स्तर पर कार्य कर इनको देश से बाहर निकाला जाए।

सभी राज्यों में शिक्षा, शासन तथा न्याय-प्रणाली का कार्य केवल राज्य भाषा में ही किया जाए। अंग्रेजी को एक विदेशी भाषा के नाते ही महाविद्यालय स्तर पर पढ़ाने का प्रबन्ध किया जाए। **अंग्रेजी का प्रभुत्व समाप्त किया जाए।** हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाया जाये।

गौ हत्या पर प्रतिबन्ध लगाया जाए।

आप हिन्दू हैं, ऋषियों का रक्त आपकी नाड़ियों में प्रवाहित हो रहा है। राष्ट्र धर्म की जो विरासत आपने अपने पूर्वजों से प्राप्त की है उसे आने वाली पीढ़ियों को सौंपने का भार आपके कंधों पर है। गौ, गंगा गायत्री एवं गीता की गरिमा को साकार करने की जिम्मेदारी भी आपकी है।

चन्द्र किशोर चड्ढा, मंत्री, राष्ट्रीय हिन्दू संघ

सामवेद में 'स्वराज्यम्' की व्याख्या

❑ प्रमिला आर्य

सृष्टि ईश्वर की सम्पूर्ण काव्य रचना है और मानव उसका केन्द्र बिन्दु तथा सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी भी। मनुष्य के जीवनकाल में सृष्टि की रचना एक अद्वितीय करिश्मा है। सृष्टि निर्माण कला क्रम में भूगोल अपनी कक्षा में स्थापित हो जाने के पश्चात क्रम पूर्वक जलचर, वनस्पति, नभचर (पक्षी), थलचर (पशु) और मनुष्य का जन्म हुआ। मनुष्य जन्म से पहले ही समस्त चराचर और वनस्पति अपने यौवन को प्राप्त कर चुकी थी। सूर्य की अग्नि, चन्द्रमा की शीतलता, दिन-रात्री तथा ऋतुएं आदि सब कुछ ईश्वर की यज्ञशाला का सामान है। यह यज्ञ अनवरत चल रहा है।

मनुष्य को ईश्वर ने बुद्धि का निमित्त ज्ञान दिया है। अच्छे बुरे करने न करने वाले कार्यों के लिए मन, बुद्धि चित्त, अहंकार का समन्वय दिया है। फिर भी यदि मनुष्य प्राकृतिक नियमों का पालन न करे तो हानि किसकी है? क्या कभी सूर्य और पृथ्वी के आकर्षण में कमी आई है? क्या दूसरे ग्रह उपग्रहों ने अपने पथ पर चलने में कभी कोताही बरती है? जब ये सब अपनी क्रियाओं पर अटल हैं तो मनुष्य क्यों पथ भ्रष्ट हो गया है। इस 'अमृत पुत्र' मानव से भी तो ईश्वर के चिन्तन में कुछ अपेक्षाएं होंगी "मनुर्भव" की वेद वाणी और "अमृतस्य पुत्रः" का सम्बोधन भी तो यह घोषणा करता है। समस्त भूगोल के ऐश्वर्य को प्राप्त करने तथा शासन करने के लिए ही तो मनुष्य का जन्म हुआ और गृहास्थाश्रम को इस सृष्टि का आधार स्तम्भ माना गया। यह सब वर्णन विस्तारपूर्वक ऋक्, यजु और सामवेद में मिलता है। स्वराज्यम् की स्थापना का दायित्व भी मनुष्य को सौंपा गया। सामवेद के पूर्वार्चिक में मंत्र सं० ४०९, ४१०, ४१२, ४१३ में स्वराज्यम् शब्द आया है। इन मंत्रों की संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार है:-

४०९—यह सत्य है कि साधना द्वारा निर्मल हुई इन्द्रियां सर्वव्यापक ईश्वर के आनन्द रस का पान करती हैं किन्तु यह पान आत्मा के साथ विचरने वाली इन्द्रियां ही कर सकती हैं और ये इन्द्रियां इन गुणों से तभी मंडित होंगी जब मनुष्य अपने ऊपर शासन कर पायेगा।

४१०— जब इन्द्रियां प्रभु के आनन्द रस का पान करती हैं तब योगसाधक सचमुच सौम्य और विनीत बनता है, आसुरी वृत्तियों के त्याग का बल मिलता है और मनुष्य ओज द्वारा अपने शरीर से कुटिलता, हिंसा, पापाचार और पाप विचार भगाने में सफल हो जाता है। यही आत्मराज्य की प्राप्ति है।

४१२—जब इन्द्रियां प्रभु के आनन्द रस का पान करती हैं तब योग साधक दृढ़ संकल्प और व्रत धारण करता है ईश्वर से बल प्राप्त कर मनुष्य उस मायावी, छली कपटी "काम" रूप मृग को अपने ज्ञान से, विवेक बुद्धि से मार डालता है और यह 'काम विनाश' ही स्वराज्यम् का चिर स्वरूप है।

४१३— हे मनुष्य तू स्वयं को दीन हीन मत समझ। ईश्वरीय ज्ञान विवेक का प्रयोग कर, तेरा वज्र प्रहार रोकने की शक्ति किसी में नहीं। तेरा बल सब विघ्न बाधाओं को झुका देने वाला है। उठ! अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर और परमात्मा के उपासना युक्त आत्म राज्य को प्राप्त कर।

इन चार मन्त्रों में स्वराज्यम् शब्द की विशद व्याख्या तथा विवेचना की गई है कि मनुष्य में जब आसुरी शक्तियों, वृत्तियों का विस्तार होता है तब व्यक्तिगत जीवन समाज, परिवार और राष्ट्र में अव्यवस्था फैलती है। वेद में कहीं पर भी सुर शब्द नहीं मिलता वहां तो देव तथा असुर मिलता है न जाने किसने तर्ज मिलाने की खातिर सुर-असुर शब्द का निर्माण किया। ये दो शब्द देव और असुर मनुष्य की वृत्तियों के अनुरूप ही उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। वेद हमें सन्देश देता है कि स्वराज्यम् का विस्तृत प्रयोग अपने जीवन में करें तो "आज दुनिया की हर बुराई स्वतः समाप्त हो जाए" क्योंकि मनुष्य ने ही अपने स्वार्थ, दम्भ, अहंकार के कारण परिवार, समाज, राष्ट्र का बंटवारा तो किया ही साथ ही भूगोल को भी बांट दिया है। और अपनी अधोगति का भी वह स्वयं ही जिम्मेदार है क्योंकि उसने भौतिक सुखों की खातिर ईश्वरीय सुख का मार्ग नहीं अपनाया। यदि हम यह स्वीकार कर लें कि "ईश्वर सर्वव्यापक है" तो जब हम बुराई की ओर प्रवृत्त होते हैं तो मन में लज्जा, शंका, भय की

(शेष पृष्ठ २८ पर)

स्वातंत्र्य वीर सावरकर की ११३वीं जयन्ती

(२८ मई १८८३—२६ फरवरी, १९६६)

तात्या अतिमानव सावरकर

❑ विनय कुमार सिंघल, अधिवक्ता

तात्या, अतिमानव सावरकर, राधेय विनायक सावरकर।
दामोदर के घर नासिक में, था उदय हुआ एक पुत्र अमर।
वह जन्मजात कवि उद्भट था, 'मैनाबाई' का भाई अजर।
था गणेश पन्त अग्रज जिसका, छोटा नारायण सावरकर।
छत्रपति शिवा का मानस पुत्र, स्वातंत्र्य समर में अति प्रवर।
'तिलक' 'श्याम' और 'दयानन्द' युग प्राण हुए जिनके गुरुवर।
चाफेकर-त्रय और राणाडे, की फांसी से ली शपथ प्रखर।
'स्वाधीनता' के निमित्त मृत्यु, या स्वराज्य करूंगा अपने कर।
'विदेशी' के बहिष्कार का मंत्र, प्रथम गुंजाया जिसने घर-घर।
'मित्र मेला' 'अभिनव भारत' से, सबल संगठनों की रचना कर।
सशस्त्र क्रांति की ध्वजा लिए, निद्रा उसने गोरों की ली हर।
'शिवा जयन्ती' 'गणपति-उत्सव' जैसे पर्वों मे प्रेरित कर।
राष्ट्रभक्ति का पाठ पढ़ाया, उस नर पुंगव ने बढ़-चढ़ कर।
स्वतंत्रता का अलख हाथ ले, चिपलूणकर की ज्येष्ठ तनया वर।
'होमरूल आंदोलन' पिछड़ा, जब पहुंचा लंदन सावरकर।
'हरदयाल' 'कामा' 'चट्टोपाध्याय' आयंगर जिसके मित्र अमर।
बम पिस्तौल निर्माण कला, सीखी एक रूसी से छिपकर।
जोजफ मोजिनो की आत्मकथा, थी अमर हुई रच उसके ही कर।
फिर रची कालजयी रचना उसने, '१८५७ का स्वातन्त्र्य समर'।
भगत सिंह सुभाष बढ़े थे, इसी ग्रंथ का सत ले कर।
किसी तरह एक दिन लंदन में, पकड़ा गया वीर सावरकर।
भारत लाते समय मार्ग में कूद पड़ा सागर में नर-वर।
किन्तु काल था नहीं पक्ष में, पुनः चढ़ा हत्थे सावरकर।
बम्बई में अभियोग चलाया, स्पेशल ट्रिब्यूनल एक्ट बनाकर।
कालेपानी का दंड सुना तो, उभरा 'वन्देमातरम्' का स्वर।
पुनः एक अभियोग चलाया, हुई परिणति कालेपानी पर।
दो-दो कालेपानी का दंड, किया अंगीकार हंस-हंस कर।
अंडमान की कारा में वह, जिया अनेकों कष्ट सहन कर।
सावरकर की स्वतंत्रता के, गांधी छोड़, सभी थे पक्षधर।
सन् चौबीस में अंडमान से, आए कलकत्ता सावरकर,
यहां अनेकों वर्ष कटे फिर, रत्नागिरि का था बन्दी घर।
'हिन्दूराष्ट्र' हिन्दू के हित, किए बहुत से काम निरन्तर।
'खड्ग' कालापानी से ग्रंथ, लिखे सभी कारा के भीतर।
वहीं लिखी थी जन्मकथा भी, और अनेकों ग्रंथ सरोवर।
दस मई, सैंतीस का दिन था, जब हुआ था मुक्त सावरकर।
हिन्दू महासभा का प्रांगण, उसको लगा सर्वाधिक रुचिकर।
आरूढ़ किया सभी ने उसको, हिन्दू राष्ट्रपति के पद पर।
एक सम एक रस एक रूप की, देता रहा वह सीख राह भर।
अछूतोद्धार का सूत्र दिया था, हिन्दू सब समान यहां पर।
देश विभाजन की शंका का, देता रहा संकेत निरंतर।
फिर भी सोता रहा राष्ट्र, और हुआ बंटवारा डटकर।
दंडित हुआ दोषी बँटवारे का, किन्तु धरा गया सावरकर।
इसीलिए अंतिम श्वासों तक, रहा मौन वह विजय स्वर।
हर हिन्दू को बढ़ करना है, तेरे ऋण का प्रतिदान यहां पर।
भारत हिन्दू राष्ट्र बनेगा, निश्चय ही इस धाम धरा पर।

काश! असमवासियों ने वीर सावरकर की चेतावनी पर ध्यान दिया होता

❑ राधिका मोहन गोस्वामी

असम प्रांतीय हिन्दू महासभा को यह सूचना प्राप्त हुई कि दिसम्बर १९३८ नागपुर में महासभा का ८वां अधिवेशन होने जा रहा है और बैरिस्टर सावरकर दूसरी बार उस अधिवेशन की अध्यक्षता करने वाले हैं। पूर्व अधिवेशन १९३७ के दिसम्बर में अहमदाबाद में सम्पन्न हुआ था। यह अधिवेशन महत्त्वपूर्ण था क्योंकि इसी साल महासभा एक राजनीतिक दल में परिणत हो गयी थी और उसके संविधान में तदनुरूप संशोधन किया गया था। इसी वर्ष बम्बई राज्य की अन्तरिम कांग्रेस सरकार ने उनको रत्नागिरी से मुक्त किया था जहां ब्रिटिश सरकार ने उनको नजरबंद रख छोड़ा था।

नजरबंदी से रिहाई के बाद विभिन्न राजनीतिक संगठनों के नेताओं ने सावरकर से भेंट की ताकि वे उनको अपनी पार्टी में शामिल होने के लिए राजी कर सकें। अभी तक हिन्दू महासभा सिर्फ एक सामाजिक व सांस्कृतिक संगठन थी। सावरकर ने यह अनुभव किया कि अगर हिन्दुओं को संगठित करना है तो न केवल एक सशक्त हिन्दू संगठन की आवश्यकता पड़ेगी बल्कि उसे भारत माता की राजनीतिक समस्याओं को भी हाथ में लेना पड़ेगा। इसलिए वह हिन्दू महासभा में शामिल हो गये और १९३७ में अहमदाबाद में आयोजित ७वें अधिवेशन के वे अध्यक्ष बनाये गये। महासभा को राजनीतिक संगठन में परिणत करा देने में उनके व्यक्तित्व, उनकी तीव्र बुद्धि, उनकी विद्वत्ता और उनकी वाग्मिता का सफल योगदान रहा। उस समय तक बहुत से कांग्रेसी हिन्दू महासभा के भी सदस्य थे, परन्तु महासभा के राजनीतिक संगठन बन जाने पर केवल उन लोगों ने इसे छोड़ दिया।

१९३८ के नागपुर अधिवेशन में, जहां सावरकर दुबारा अध्यक्ष चुने गये, उन्होंने अपना राजनीतिक दर्शन इस प्रकार रखा : भारत में हिन्दुओं का विशाल बहुमत है, भारत की संस्कृति और सभ्यता हिन्दुओं की देन है, भारत का इतिहास हिन्दुओं के ही उत्थान-पतन का इतिहास है, इसलिए भारत में हिन्दू ही राष्ट्र है, अन्य लोग तो इस देश में रहने वाले भिन्न-भिन्न समुदाय मात्र हैं।

असम की घटनाएं

उनके उक्त चिन्तन का असम की घटनाओं ने औचित्य सिद्ध कर दिया। १९०५ में बंगभंग और पूर्वी बंगाल नामक नये प्रान्त के निर्माण से पूर्वी भारत में भारी राजनीतिक परिवर्तन हो गया। भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन ने भारत के इस सुदूर पूर्वी क्षेत्र में एक मुस्लिम अंचल बनाने की दृष्टि से वैसा किया था। उनकी कल्पना असम की विस्तीर्ण खाली भूमि को, पूर्वी बंगाल, खासकर मैमनसिंह जिले के मुसलमानों से भर देना था। सिलहट जिले को इस नये प्रांत का भी जिला बना दिया गया क्योंकि उस जिले में पहले से ही अच्छी खासी मुस्लिम आबादी थी। परन्तु बंगाल में भारी असंतोष और आन्दोलन भड़क उठने के कारण ब्रिटिश सरकार को फिर से सभी जिले बंगाल को दे देने पड़े। केवल सिलहट जिला अपवाद रहा जो असम का अंग बन गया।

ब्रिटिश नीति के कारण हजारों की संख्या में मुसलमानों के असम में आ जाने और वहां स्थायी रूप से बस जाने के लिए प्रोत्साहन मिला। ब्रिटिश सरकार ने उनको तेजी से जमीन पर कब्जा कर लेने के लिए मुसलमानों की हर तरह से सहायता की और एक या दो दशक के अन्दर संपूर्ण ग्वालपाड़ा जिला मुसलमानों से भर गया। इसके बाद बारपेटा सबडिवीजन इस मुस्लिम अतिक्रमण का शिकार बन गया। धीरे-धीरे नवगांव जिला भी उनके चंगुल में आ गया। तत्पश्चात उन लोगों ने लखीमपुर जिले में भी कब्जा करना शुरू कर दिया। उसके बाद मंगलदई की बारी आयी। सिलहट का पड़ोसी कछार जिला भी शीघ्र ही मुस्लिम बहुल जिला बन गया। १९३० में भारत के जनगणना कमिश्नर डॉ० जे० एच० हट्टन और असम के जनगणना अधीक्षक सी० एस० मुल्लन की रिपोटों से भारत के इस पूर्वी प्रान्त के भविष्य का चित्र साफ हो गया। डॉ० हट्टन ने अपनी रिपोर्ट में मुस्लिम जनसंख्या में वृद्धि, भूमि पर उनके द्वारा कब्जा तथा उनकी तेज जन्म दर का ग्राफ चित्र दर्शाया था। उन्होंने मुसलमानों के इस सामूहिक अभियान की तुलना चीटियों की लम्बी पंक्तियों से की थी। मुल्लन ने यह मंतव्य व्यक्त

किया था कि ३० वर्ष के बाद कोई भी असमी सिर्फ लखीमपुर और शिवसागर जिलों में ही राहत अनुभव पायेगा। डॉ० हट्टन ने कहा था कि पड़ोसी के रूप में ये स्थानांतरित मुस्लिम बहुत उद्धत हैं। असम की प्रान्तीय हिन्दू महासभा ने नागपुर अधिवेशन में प्रतिनिधियों को भेजने का निश्चय किया ताकि हिन्दू समाज के नेताओं को भारत के इस भूभाग में हो रहे सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों की जानकारी देने के साथ-साथ यह जानकारी भी दी जा सके कि आगन्तुक मुस्लिम बहुमत समाज बन जाने के लिए किस प्रकार चुपचाप काम कर रहे हैं।

तदनुसार नागपुर अधिवेशन में भाग लेने के लिए एक दिन दो प्रतिनिधि चुन लिये गये जिनमें से एक थे स्वर्गीय वृन्दावन चंद्र गोस्वामी और दूसरा इस लेख का लेखक स्वयं मैं। मैंने 'असम की एक झलक' (ए पीप इनटू असम) शीर्षक से एक बुकलेट तैयार की जिसमें मैंने हिन्दुओं और नवागंतुकों के बारे में कुछ सच्चे तथ्यों को हिन्दू नेताओं के ध्यान में ला देने की कोशिश की थी। भिन्न-भिन्न भाषाओं और विभिन्न जीवनशैली के कारण हिन्दू विभक्त और उपविभक्त थे और परस्पर एक-दूसरे को विदेशी समझते थे, जबकी नवागन्तुक मुसलमान इस्लाम के नाम पर हिन्दुओं के विरुद्ध एकजूट थे। नागपुर अधिवेशन शुरू होने से दो दिन पहले हम नागपुर पहुंच गये और देश के विभिन्न भागों से आये अनेक प्रतिनिधियों से मिले जिनमें बौद्ध मठाधीश भी शामिल थे। दूसरे दिन प्रातःकाल वीर सावरकर नागपुर रेलवे स्टेशन पर आये जहां से एक लम्बे जुलूस के साथ अधिवेशन स्थल पर ले जाया गया। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये। उन्होंने यह घोषणा की कि भारत में हिन्दू ही राष्ट्र है और मुसलमान महज एक समाज है। ईसाइयों के बारे में उन्होंने कहा कि वे राजनीति में दखल नहीं दे रहे हैं, परन्तु ईसाइयत एक 'धर्मन्तरकारी चर्च' है अतः हमें उनके प्रति सतर्क रहना चाहिए। विश्व स्थिति के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने यूरोपीय महादेशों के बीच चल रहे झगड़ों को देखते हुए महाविपत्ति की आशंका व्यक्त की।

पाकिस्तान की शुरूआत

कुछ मुसलमानों द्वारा पाकिस्तान के निर्माण के लिए शुरू किये प्रयासों पर भी इस अधिवेशन में विचार किया गया। उस समय केवल पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत के एक छोटे से क्षेत्र को ही पाकिस्तान के लिए इंगित किया गया था, परन्तु किसी ने उसको व्यावहारिक नहीं समझा। मैंने किसी रहमत अली द्वारा प्रकाशित किया एक नक्शा देखा जिसमें भावी पाकिस्तान को हरे रंग में दर्शाया गया था।

नागपुर से लौटकर मैंने वीर सावरकर का एक जीवन वृत्त तैयार किया जो कलकत्ता की असमी पत्रिका 'आवाहन' में प्रकाशित हुआ। सावरकर और उनके वीरतापूर्ण कार्यों के बारे में असमिया भाषा में छपने वाला वह एकमेव लेख है। इस लेख ने असम के पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया और असम की जनता सावरकर की महान उपलब्धियों से परिचित हो सकी। मैंने नागपुर में अपनी पुस्तिका (बुकलेट) वितरित की थी और स्वयं सावरकर सहित कुछ नेताओं को भी दी थी। अधिवेशन के दूसरे दिन एक सूचना प्रसारित की गयी जिसमें प्रतिनिधियों से नगर के निकट ही खुले मैदान में आयोजित राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ की रैली में भाग लेने का अनुरोध किया गया। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कैम्प में सेवा कर रहे संघ के अनेक स्वयं सेवक पूर्ण गणवेश में वहां उपस्थित थे। परमपूजनीय डाक्टर केशव बलिराम हेडगेवार भी वहां पूर्ण गणवेश में चलते-फिरते दिखायी पड़े। पूछने पर हमें बताया गया कि हर स्वयंसेवक स्वयं अपना गणवेश खरीदता है। उनको ऐसा प्रशिक्षण मिलता है जिसमें वे हमेशा सतर्क और चुस्त रहते हैं तथा सौंपी गयी किसी भी जिम्मेदारी को पूरा करने के लिए सन्नद्ध रहते हैं। इस संगठन को देखकर मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, मानों मैं कोई प्रकाश देख रहा हूं और मैंने यह अनुभव किया कि नवागन्तुकों के जत्थे के जत्थे अतिक्रमण के दूरगामी दुष्परिणामों से असम को बचाने के लिए मात्र यही एक उपाय है।

नागपुर से लौट कर हमने जो कुछ वहां देखा और सुना था, उससे अपने मित्रों को अवगत कराया। हमने देश के हिन्दू समाज को नवचैतन्यपूर्ण और सशक्त बनाने के लिए डाक्टर हेडगेवार द्वारा स्थापित संगठन के महत्त्व को अपनी जनता को समझाने की चेष्टा की। उन भागों के हिन्दू अपने देश में हिन्दुओं के गिरती सामाजिक और राजनीतिक दशा के प्रति अधिक सतर्क हैं। इसके अलावा हैदराबाद के निजाम के हिन्दू विरोधी कदमों के विरुद्ध जिसके कारण वहां की हिन्दू प्रजा द्वितीय श्रेणी के नागरिक बन कर रह गयी है, हैदराबाद में एक आन्दोलन चल रहा था। हजारों सत्याग्रही जेल गये, जहां उनको यातनाएं दी जा रही थीं। पूरे देश से

लोग सत्याग्रह करने के लिए वहां गये।

गलत धारणा

असम के हिन्दुओं ने असम के लिए भावी खतरे पर गंभीरता से विचार नहीं किया। बल्कि वे इस गलत धारणा से त्रस्त रहे कि नवागन्तुक बहुत काम के आदमी हैं क्योंकि वे अच्छे कृषिकार हैं और असमिया को शिस्त के माध्यम के रूप में अंगीकार करने को तैयार हैं। पर समय की गति ने यह सिद्ध कर दिया कि भाषा की एकता अपने आप में एक जोड़ने वाला पहलू हो सकता है, पर वह पर्याप्त नहीं है। वह तो केवल संस्कृति और परम्परा ही जनता को एकताबद्ध कर सकती है। पूर्वी पाकिस्तान इसका एक स्पष्ट उदाहरण है। पाकिस्तान के उस मुस्लिम बहुल भाग में बंगला सामान्य भाषा होने के बावजूद हिन्दुओं को वहां बने रहने देने में सहायक नहीं सिद्ध हुई। लाखों हिन्दुओं को अपना घरबार छोड़कर भारत में शरण लेनी पड़ी। आज भारत के सबसे पूर्वी क्षेत्र में असम मुस्लिम बहुल राज्य बनने जा रहा है। लार्ड कर्जन का सपना शीघ्र ही पूरा होने जा रहा है।

नागपुर के बाद १९३९ में कलकत्ता में हिन्दू महासभा का अधिवेशन हुआ। मुख्य न्यायाधीश मन्मथनाथ मुखर्जी स्वागत समिति के अध्यक्ष और डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी महामंत्री चुने गये। सावरकर ने अपने भाषण में बता दिया कि एक राजनीतिक संगठन के रूप में हिन्दू महासभा को क्या-क्या करना है। हावड़ा से वेलिंगटन पार्क तक उनका जुलूस इतना लंबा था जितना लंबा जुलूस मैंने पहले कभी नहीं देखा था। लाहौर की शहीदगंज मस्जिद के सम्बध में मास्टर तारासिंह की सेवाओं को देखते हुए अधिवेशन के प्रथम दिन उनका सत्कार किया गया। यह मस्जिद मूलतः सिख गुरुद्वारा थी, परन्तु उसे जबर्दस्ती मस्जिद में बदल दिया था। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दीर्घ संघर्ष के बाद लाहौर हाईकोर्ट ने उसे सिखों की सम्पत्ति घोषित किया था। (जस्टिस दीन मुहम्मद ने उस फैसले से अपनी असहमति व्यक्त की थी।) विषय समिति की बैठक ने डॉ० हेडगेवार के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को हिन्दुओं का संगठन करने का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ स्वीकार किया और देश के भिन्न-भिन्न भागों में काम करने के लिए संगठकों (प्रचारकों) को नियुक्त किया। इसी अधिवेशन में डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी हिन्दुओं के नेता के रूप में प्रकाश में आये और उन्होंने आजीवन इस स्थिति को अक्षुण्ण बनाये रखा।

१९३९ में सावरकर बंगाल और असम के दौरे पर आये। उन्होंने पूर्वी बंगाल से झुंड के झुंड मुसलमानों के असम में अनवरत आगमन को देखते हुए असम के भावी जनसंख्या ढांचे के प्रति हिन्दुओं को चेतावनी दी। यह सामायिक चेतावनी थी क्योंकि ग्वालपाड़ा, कामरूप, नवगांव, लखीमपुर आदि जिलों में मुसलमानों की संख्या बहुत अधिक हो गयी। परन्तु असम के हिन्दुओं ने उनकी चेतावनी पर कोई ध्यान नहीं दिया। दूसरी ओर, एक प्रमुख कांग्रेसी नेता ने, जो अब स्वर्ग सिधार चुके हैं, कलकत्ता की 'अमृत बाजार पत्रिका' में एक चिट्ठी छपवायी जिसमें सावरकर को सांप्रदायिक, अदेशभक्त और देशद्रोही बताया गया था। कांग्रेसी नेता सिर पर मंडराते खतरे को देखने में असमर्थ रहे। मुसलमानों की मांग पर कांग्रेसी नेता देश का बंटवारा करने पर राजी हो गये और इस प्रकार वे दो मुस्लिम देशों के निर्माण के माध्यम बन गये जहां हिन्दू तनिक भी सुरक्षित भी नहीं रहे। लाखों हिन्दुओं को अपने घर-द्वार छोड़ कर भारत में शरण लेने के लिए विवश होना पड़ा।

अब असम उस द्विराष्ट्र सिद्धान्त का शिकार है जहां मुस्लिम नेता उसे मुस्लिम बहुल राज्य बना देने के प्रयत्न में जुटे हुए हैं ताकि वे भारत में एक तीसरा पाकिस्तान बना कर रख दें। सावरकर ने इस स्थिति को पहले ही भांप लिया था और हिन्दुओं को सतर्क किया था, परन्तु असमी हिन्दू उनकी चेतावनी पर ध्यान देने में विफल रहे। असम के मुस्लिम असम को पूर्वी पाकिस्तान का भाग बनाना चाहते थे और असानी मौलवी के नाम से प्रसिद्ध अब्दुल हमीद चौधरी ने विभाजन के बाद पूर्वी भारत के मुसलमानों को असम को बंगलादेश का भाग बना देने के लिए खुलेआम उकसाया था। चाहे हम कितनी भी खुशामद या अनुरोध करें हम मुसलमानों को भारत को मातृभूमि मानकर उससे प्रेम करने के लिए नहीं तैयार कर सकते और न वे मुस्लिमेत्तर भारतीय समुदाय को अपना भाई ही मान सकते हैं।

अनुवाद : पुरुषोत्तम प्रसाद मिश्र

हमारा यह तन पांच तत्वों से बना है। पृथ्वी जल, वायु, अग्नि और प्रकाश। ये पाँच तत्व परोपकार का ही रूप हैं। पृथ्वी दुख सहकर भी अन्न प्रदान करती है। जल बरसता है तो चारों ओर हरियाली बस जाती है, नदियां, तालाब, कुएं जलरूपी अमृत से भर जाते हैं जो हमें हर प्रकार की शीतलता प्रदान करते हैं। वायु दिन-रात हमारी सेवा करती है। अग्नि का उपकार कौन भूल सकता है। आकाश की कृपा से हम वार्तालाप कर पाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन पांच तत्वों के मालिक देवता दिन-रात परोपकार करते हैं।

आग्नेय जीवनव्रती वीर सावरकर

❑ वन्देमातरम् रामचन्द्र राव

अपि स्वर्णमयि लंका न में रोच्यते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि॥

(हो सकता है कि लंकार सोने की खान हो, परन्तु हे लक्ष्मण, यह मुझे नहीं भाती। केवल माता तथा मातृभूमि ही मुझे प्यारी है, स्वर्ग से भी प्यारी।)

लंका पर विजय प्राप्त की जा चुकी थी, रावण तथा उसके लगभग सभी साथी मारे जा चुके थे। राम को सम्बोधित करते हुए लक्ष्मण ने यह इच्छा व्यक्त की, कि लंका को भारत का अभिन्न अंग बना लिया जाए। आपने ऊपर पढ़ा कि किस प्रकार श्री राम ने लक्ष्मण की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। सावरकर जी भी इसी विचार के थे। उन्होंने बुराई से अधिक महत्त्व सद्गुणों को दिया चाहे वह बुराई देखने में कितनी ही चमक-दमक वाली तथा मन भावन क्यों न लगती हो। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मैं उन्हें श्री रामचन्द्र के समकक्ष रखना चाहता हूं। **सावरकर जी स्वयं श्रीराम के परम भक्त थे। उनमें भी वही दृढ़ चरित्र था जिसके आधार पर वे श्री राम के पद चिह्नों पर चल सके।**

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की "धर्म" के विषय में अपनी ही अवधारणा थी। अधिकारिक रूप में जो रावण की लंका थी उसे लंकावासियों को ही देना चाहिए, यह उनकी भावना थी। श्री राम रावण को केवल उसके कुकृत्यों का दंड देना चाहते थे, उसकी भूमि को छीनना उनका लक्ष्य नहीं था।

सावरकर एक मेधावी युवक थे। यदि वे सत्ता तथा धन चाहते तो उनके लिए सब कुछ सुलभ था परन्तु उन्होंने मात्र भूमि की सेवा को ही सर्वोपरि माना। श्री राम की तरह सावरकर भी ब्रिटिश शासकों को उनकी गलती महसूस करवाकर भारत छोड़ने के लिए विवश करना चाहते थे। स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर का जन्म २८ मई १८८३, सोमवार के दिन हुआ था। जिस वर्ष सावरकर जी का जन्म हुआ उसी वर्ष श्री वासुदेव बलवन्त फड़के का देहावसान हुआ था। आज भारत में बहुत से लोगों ने तो फड़के का नाम भी नहीं सुना होगा। कुछ लोगों का यह विचार था कि फड़के की आत्मा ने ही सावरकर के शरीर में प्रवेश किया था। हम पुनर्जन्म में विश्वास रखतेहैं, अतः यह सब विचार असंभव कल्पना नहीं। सावरकर जी के छात्र जीवन की गतिविधियां, उनका देशभक्त स्वभाव, भरपूर साहस, सोच-विचार का तरीका तथा जब भी परिस्थितिवश आवश्यकता पड़ी कार्यक्षेत्र में कूद पड़ने की उनकी आदत के कारण ही लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को उनके विषय में निम्न टिप्पणी करनी पड़ी।

"ऐसा लगता है कि हमारे बीच शिवाजी पैदा हो चुका है"

हम कुछ ऐसी घटनाओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं जिनमें सावरकर जी ने एक युवक के रूप में भूमिका निभाई। जब सावरकर पूना के फरगुसन कालेज में पढ़ते थे, रानी विक्टोरिया के नाम पर एक आयोजन किया जाने लगा। सावरकर जी ने इसका विरोध किया। परिणाम स्वरूप उन्हें कालेज से निष्कासित कर दिया गया अधिकारी चाहते थे कि सावरकर माफी मांगे परन्तु सावरकर का उत्तर नकारात्मक था। उन्होंने विदेशी शासकों के सामने झुकना स्वीकार नहीं किया। इसी प्रकार की एक और घटना ब्रिटेन में हुई। जहां सावरकर कानून की शिक्षा प्राप्त करने गये थे। भारत को स्वातन्त्र कराने के उद्देश्य से वहां उन्होंने क्रान्तिकारी युवकों का गुट बनाया और इन गतिविधियों के कारण परीक्षा उत्तीर्ण करने के बावजूद उन्हें वह डिग्री दिये जाने से मना कर दिया गया, परन्तु सावरकर मांफी मांगने को तैयार नहीं थे। भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ों पर कुठाराघात करने के उद्देश्य से उन्होंने यह व्यवस्था की थी कि उनके कुछ साथी रूस और अन्य देशों में जाकर हथियार तथा बम चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें।

अपने छात्र जीवन में जब सावरकर जी इंग्लैंड में थे वे लंदन के घंटाघर में शिवाजी वघनखा देखने गये। केवल

एक नजर देखकर सावरकर ने यह महसूस किया कि यह शिवाजी का बाघनखा नहीं है जो उन्होंने उस समय प्रयोग किया था जब अफजल खान ने चालाकी से उनकी हत्या करने की योजना बनाई थी। टीपू की तलवार पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सावरकर के शब्द थे– "जब मैंने टीपू की तलवार को देखा तो मैंने महसूस किया कि यह अवश्य ही ब्रिटिश शासकों के विरुद्ध एक प्रबल प्रहार होगा।" श्री सावरकर दुःखी थे, इस बात पर कि उन्हें शिवाजी की असली तलवार नहीं दिखायी गयी। उक्त दोनों घटनायें यह दिखाती हैं कि सावरकर साम्प्रदायिक नहीं थे परन्तु वह देशभक्तों के प्रशंसक थे। उनकी संस्था अभिनव भारत में भारत के विभिन्न प्रान्तों तथा अलग-अलग मतों के लोग सदस्य थे। मिर्जा अब्बास उनमें से एक थे। मैडम क़ामा, जिन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता का ध्वज फहराया था, अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सम्मेलन में भी उपस्थित रही थी। जाति व सम्प्रदाय का ख्याल न रखते हुए सावरकर एक देशभक्त होने केनाते अपने देशवासियों से बहुत प्यार करते थे।

मुसलमानों के सम्बन्ध में, ऐसा कहा जाता है, सावरकर उनके शत्रु थे। सावरकर जी के अंडमान जेल से रिहा होने के बाद मैं उनके साथ जुड़ा रहा। अंडमान और रत्नागिरि में मुसलमानों द्वारा किये गये व्यवहार के कारण उन्होंने महसूस किया कि ये लोग पहले मुसलमान हैं तथा इस्लाम के साथ बंधे हुए हैं। अखिल इस्लामवाद के प्रति आसक्त हैं।

मैं यहां सावरकर जी के उस अनुभव को बताना चाहता हूँ। जब जेल में हिन्दू कैदियों को भोजन दिया जाता तो कुछ मुसलमान उसे जानबूझकर पहले छूते थे जिससे हिन्दू कैदी यह समझें कि उनका भोजन अपवित्र हो गया है तथा खाने योग्य नहीं रहा। ऐसा जेल अधिकारियों की मिलीभगत से प्रतिदिन होता था। इससे ऐसी परिस्थिति बनी कि कई हिन्दू कैदियों को कई दिन भोजन न करने से भूखों रहना पड़ा, इसका कोई समाधान नजर नहीं आ रहा था। परिणाम स्वरूप कुछ हिन्दुओं ने इस्लाम को अपना लिया सावरकर जी इसके प्रत्यक्षदर्शी थे। उन्होंने एक योजना पर विचार किया। सब हिन्दुओं को एक स्थान पर इकट्ठा किया गया और उनसे गायत्री मन्त्र का उच्चारण करवाया गया। सावरकर जी ने उन्हें समझाया कि स्वयं को भूखा मारने और मुसलमान होने से बचाने का यही एक उपाय है।

ईसाई मिशनरियों ने भी इसी प्रकार के कार्य किये। कई हिन्दू प्रलोभन वश ईसाई बनते गये। सावरकर जी ने यहां भी धर्मान्तिरित ईसाइयों का एक सम्मेलन बुलाकर उन्हें अपने पूर्वजों के धर्म में आने के लिए प्रेरित किया। इस तरह वे अंडमान में शुद्धि आन्दोलन के सूत्रधार बने। जाधव नाम का एक व्यक्ति भी अपने मूल धर्म में वापिस आया था यह सब कार्य जेल में ही चलता रहा। हिन्दुओं से ईसाई बनने की गतिविधियों का क्या परिणाम निकला, यह सद सैयद की -रिसाला आसवावे बगावते हिन्द" में मिलता है। ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन से ईसाई मिशनरियों की धर्मान्तरण गतिविधियां हमारे असन्तोष का प्रमुख कारण हैं। सन् १८५७-५८ में भारतवासियों ने एकता के साथ ईसाई मिशनरियों के द्वाराभारत को एक ईसाई देश बनाने की योजना को विफल किया। ब्रिटिश शासक बहुत कुटिल हैं। वे हार को स्वीकार करते हैं परन्तु उस हार के कारणों पर गम्भीर चिन्तन एवं अध्ययन करते हैं। उन्होंने एक योजना बनाई। मुसलमानों को अपने साथ मिलाने के लिए उन्हें फंसाना शुरू किया। इसमें उन्हें बहुत सफलता मिली। सद सैयद इस विषय में आगे लिखते हैं-

"ब्रिटिश शासन को इस देश में स्थापित करने की जिम्मेवारी हम स्वीकार करते हैं। इस संयुक्त कार्य में हमारा और उनका सहयोग ऐसा निकट का और अटूट है कि जैसे कैंची के दो फलक। ब्रिटिश शासक भारत में लम्बी अवधि तक रहें ऐसी हम भगवान से प्रार्थना करते हैं"।

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि कई मुसलमान नेता ब्रिटिश शासकों के सहयोगी थे। हिन्दुओं से ईसाई बने लोग उनके उद्देश्य की पूर्ति में एक अतिरिक्त ताकत बन गये। अंडमान और रत्नागिरि के अनुभवों ने सावरकर जी की सोच को पुष्ट कर दिया था। स्वराज्य की लड़ाई के लिये गांधी जी और सावरकर जी के विचार भिन्न थे। गांधी की यह घोषणा थी कि हिन्दू मुस्लिम एकता आवश्यक है। वह मुसलमानों के प्रति विशेष प्रेम भाव रखते थे। वह खिलाफत आन्दोलन के अध्यक्ष भी बने। खिलाफत के प्रश्न पर मुहम्मद अली तथा शौकत अली ने स्वयं को काबा का नौकर भी घोषित कर दिया, सारा मुस्लिम समाज धधक उठा। सावरकर जी ने मुस्लिम मनोवृत्ति को समझ लिया था। वे उनकी नब्ज गांधी जी से अधिक पहचानते थे। उनका नारा था "हमें स्वतंत्रता की लड़ाई जारी रखनी है, यदि वे (मुस्लिम) साथ

आते हैं, तो उनके साथ, यदि वे नहीं आते तो उनके बिना और यदि वे विरोध करते हैं तो उनके विरोध के बावजूद।

सावरकर जी कहा करते थे कि आज के मुसलमान बीते हुए कल के हिन्दू हैं। उनकी नसों में भी राम और कृष्ण का रक्त बहता है। ऐतिहासिक और सांस्कृतिकरूप से सब एक हैं। अपने मत और पंथ के दृष्टिकोण से वे अलग हो सकते हैं, परन्तु राष्ट्र की दृष्टिकोण से सब एक राष्ट्र के निवासी हैं।

स्वतन्त्रता के लिए सावरकर क्रान्ति में विश्वास रखते थे। गांधी अहिंसा में। जिसे गांधी अहिंसा कहते थे उसका परीक्षण उन्होंने स्वतंत्रता के युद्ध में किया। इसके परिणाम स्वरूप देश का विभाजन हुआ। हजारों हिन्दुओं और मुसलमानों को काल का अनायास ग्रास बनना पड़ा।

श्री सावरकर ने यह सिद्ध करने में सफलता प्राप्त की कि राक्षसों के साथ बर्ताव अहिंसा से करके सफलता नहीं मिल सकती। युद्ध में बदलती परिस्थितियों की प्रकृति को समझने के लिये हमें, राजनीतिक, वीरता, और पराक्रम का इतिहास जानना चाहिये और सफलता के लिए हिंसा अथवा अहिंसा प्रत्येक हथियार का प्रयोग करना चाहिए। हिन्दुओं ने प्रत्येक मोर्चे पर खोया ही है। भारत के टुकड़े हो गये तथा वह हिस्सा जो आज पाकिस्तान कहलाता है मुसलमानों को उनके द्वारा ब्रिटिश शासकों को दी गयी मदद के उपहार स्वरूप दे दिया गया। हैदराबाद के सर्वाधिक अमीर शासक निजाम ने जब भारतीय संघ में मिलने से इन्कार कर दिया, तो आर्य समाज ने महात्मा नारायण स्वामी तथा वीर सावरकर जी के नेतृत्व में महती भूमिका निभाई। इसका श्रेय श्री सरदार पटेल को भी जाता है। जिन्होंने भारत सरकार के गृहमंत्री होने के नाते उचित समय पर कार्रवाई की। यदि गांधी जी की अहिंसा सम्बन्धी नीति को निजाम हैदराबाद के परिप्रेक्ष्य में लागू किया जाता तो भारतीय संघ के अन्दर हैदराबाद रियासत का एक स्वतन्त्र इस्लामी गणराज्य के रूप में उदय वास्तविकता बन जाता। परन्तु ...... मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति आज भी यहां इस कदर विद्यमान है कि इसने हमारे संविधान में भी उसने परोक्षतः स्थान प्राप्त कर लिया है। आज हम भारतीय अपने राष्ट्र को अपनी मातृभूमि को तब ही विखंडित होने से बचा सकते हैं यदि हम वीर सावरकर तथा महर्षि दयानन्द के शिष्यों का पदानुसरण करें।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा भवन
रामलीला मैदान, नई दिल्ली

श्री देवरस सावरकर गौरव पुरस्कार से सम्मानित

नागपुर : स्वातन्त्र्य वीर सावरकर स्मारक समिति की ओर से श्री बालासाहब देवरस स्थानीय पंजाब राव देशमुख सभागृह में आयोजित समारोह में सुप्रसिद्ध संगीतकार, गायक एवं निर्देशक सुधीर फड़के के हाथों श्री बालासाहब देवरस को स्वातन्त्र्य वीर सावरकर गौरव पुरस्कार प्रदान किया गया। स्वास्थ्य की खराबी के कारण बोल पाना कठिन होने से श्री बाला साहब का भाषण उनके निजी सचिव श्रीकान्त जोशी ने पढ़कर सुनाया।

श्री बाला साहब ने अपने भाषण के प्रारम्भ में स्वातन्त्र्य वीर सावरकर जी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा कि 'सभी लोग जानते हैं कि मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है फिर भी मुझे इस पुरस्कार से सम्मानित करने योग्य समझा गया। अतः मेरी तो मान्यता यही है कि यह सम्मान किसी एक व्यक्ति का नहीं बल्कि हिन्दू समाज को संगठित करने वाले तथा 'हिन्दुत्व' को इस देश में प्रतिष्ठापित कर सम्पूर्ण विश्व की मान्यता प्राप्त कराने में सफल राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्य को सम्मानित करने हेतु यह पुरस्कार दिया गया है। संघ के एक प्रतिनिधि स्वयं सेवक के नाते मैं उसे स्वीकार कर रहा हूँ।

इसी समारोह में हिन्दू सभा के वरिष्ठ नेता श्री विक्रम सावरकर ने कहा कि श्री बाला साहब देवरस का अस्तित्व हिन्दू समाज के लिए तेजस्वी सूर्य की भांति है। उनके सरसंघचालकत्व का कार्यकाल अत्यन्त कठिन और चुनौती भरा रहा है, किन्तु उन सबको मात कर हिन्दू समाज को बलशाली बनाने का कार्य उन्होंने किया। और आज सम्पूर्ण विश्व में हिन्दुत्व का विचार धीरे-धीरे प्रभावित होता जा रहा है। ईश्वर से विनम्र प्रार्थना है कि श्री देवरस शतायु हों और अपनी आंखों से अखण्ड हिन्दू राष्ट्र और लाल किले पर भगवा ध्वज को लहराते हुए देखें।

समारोह में श्री देवरस जी को शाल श्रीफल सम्मान चिह्न और २५०१ रुपए देकर सम्मान किया गया। समिति के अध्यक्ष डा० सुधाकर राव भालेराव ने प्रास्ताविक और कार्यवाह डा० श्री प्र० कुलकर्णी के आभार प्रदर्शन किया। समारोह का संचालन प्रा० किशोर महाबल ने किया। डा० पंजाब राव देशमुख सभागृह तथा दर्शकों से खचाखच भरा था।

सावरकर की हिन्दुत्व व्याख्या ही स्वीकार थी डॉ० हेडगेवार को

❑ यादव राव जोशी

मुझे सावरकर जी को देखने का प्रसंग उस समय आया जब वे अपने विदर्भ प्रवास के दौरान नागपुर आये थे। उन दिनों मैं सिटी कालेज में एम. ए. में पढ़ता था। विदर्भ के उनके प्रवास की व्यवस्था डाक्टर हेडगेवार जी ने ही अपने जिम्मे ली थी। श्री शंकर समुद्र को निजी सचिव के नाते दौरे पर उनके साथ डाक्टर साहब ने भेजा था।

नागपुर में २-३ दिन के वास्तव्य में उनके तीन कार्यक्रम हुए। एक चिटणीस पार्क में, दूसरा नागपुर नगरपालिका में और तीसरा नागपुर विश्व विद्यालय में। इन तीन दिनों में उन्होंने सारा नागपुर शहर जीत लिया। सारी नगरी मानो सावरकर मय हो गयी। कांग्रेस ने अपने कार्यकर्ताओं को निर्देश दिया था कि सावरकरजी की सभा में कोई न जाये। किन्तु उनका आकर्षण इतना प्रबल था कि सभी कांग्रेसी चोरी छिपे उनकी सभा में आये। एक भी कांग्रेसी ऐसा नहीं था जिसने उन्हें न सुना हो।

कांग्रेस वाले सभा भंग न कर पायें इसके लिए डाक्टर साहब ने संघ स्वयंसेवकों के माध्यम से चिटणीस पार्क में व्यवस्था कर रखी थी। किन्तु सावरकर जी के प्रथम वाक्य ने ही ऐसी मोहिनी डाली कि सभी मंत्रमुग्ध हो उठे। उन्होंने कहा कि 'जब हम लोग क्रांतिकार्य करते थे तब लोग हम लोगों को सिरफिरा कहते थे। किन्तु हमें सिर था इसलिए तो वह फिर सका।' इस पर प्रचण्ड ताली बजी। आगे उन्होंने कहा कि 'मेरा स्वागत उन सारे क्रान्तिकारियों का स्वागत है जिन्होंने अपनी सारी तरुणाई मातृभूमि की सेवा में समर्पित कर दी। आज मेरे स्वागत के लिए अनेक द्वार बनाये गये हैं। किन्तु उनमें से जब मैं गुजरता था तो मुझे अंदमान के सेल्युलर जेल का प्रवेश द्वार याद आता था जिसमें प्रवेश करने के बाद अनेक वापस ही नहीं आये।'

चिटणीस पार्क के अपने भाषण में उन्होंने विशुद्ध हिन्दूराष्ट्र का प्रतिपादन किया। नगरपालिका में उन्होंने जाति-पंथ-संप्रदाय निर्विशेष राष्ट्र तत्त्व का प्रतिपादन किया। विश्वविद्यालय में भी इसी से मिलता-जुलता विषय था। हजारों विद्यार्थियों को उन्होंने पागल बना दिया। मेरे राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक थे श्री डी० के० गर्दे। प्रकाण्ड विद्वान थे और कांग्रेसी थे। उनके मुख से सहज उद्गार निकले, "It was Wonderful Oratory" उनकी तार्किकता, इतिहासज्ञान, भावप्रवणता, शब्दलालित्य आदि के सम्मिलित प्रभाव से कोई भी बच नहीं पाता था। सारा वातावरण 'सावरकरवाद' से भर उठा। हिन्दुत्व के विचार से सभी अभिभूत हो उठे। उन्होंने एक वैचारिक लहर निर्माण की। भारत में स्वामी विवेकानन्द एवं सावरकर ऐसे दो व्यक्तित्व हैं जिनसे लोगों ने विशुद्ध राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र के लिए जीवन समर्पण की प्रेरणा ली। बैरिस्टर आसिफ अली और सर सिकन्दर हयात खां भी सावरकर जी से प्रेरणा लेने वालों में थे।

सावरकरजी का डाक्टर साहब पर बहुत प्रभाव था। डाक्टर साहब ने उनकी हिन्दुत्व की व्याख्या को अपनाया। मैं जब १५-१६ वर्ष का रहा होऊंगा तब की बात मुझे स्मरण है। सावरकरजी की नजरबन्दी की अवधि दो वर्ष बढ़ा दी गई थी। डाक्टर साहब उस दिन शाखा में आये और यह बात उन्होंने भावोत्कट एवं हृदयस्पर्शी ढंग से बतायी। पांच मिनट के उनके भाषण ने मेरे मन में संकल्प जगा दिया कि अपना सारा जीवन हिन्दू राष्ट्र सेवा में ही लगा देना चाहिए।

ऐसा कहा जाता है कि डाक्टर साहब के मन में उन्हें सरसंघ चालक बनाने की इच्छा थी। किन्तु यह नहीं हो सका। एक बार उन्होंने उनसे ऐसा दायित्व सम्हालने के लिए कहा भी, किन्तु सावरकरजी ने कहा कि मेरा काम तो उस धुआंधार वर्षा के समान है जो संपूर्ण पृथ्वी को जलमग्न कर देता है। किन्तु उस पानी को समेटने के लिए मेड़ खड़ी करना और खेती के काम में उसे लगाना मेरी प्रकृति में नहीं है। इसलिए सावरकरजी लहर का निर्माण तो करते थे किन्तु समेट कर दिशा देने का प्रयास नहीं हो पाता था। उनके विदर्भ प्रवासके समय अकोला में भाषण के बाद डाक्टर साहब ने आगे कार्यविस्तार की दृष्टि से विदर्भ के १००-१५० कार्यकर्ताओं को रात्रि में एकत्रित किया। उनकी इच्छा थी

सावरकरजी उनकेसाथ बैठकर बातचीत करें। किन्तु उन्होंने डाक्टर साहब से ही यह कार्य करने को कहा। अंदमान की काल-कोठरियों में प्रदीर्घ काल तक एकान्तवास ने उनकी प्रकृति पर ऐसा कुछ परिणाम किया था कि विद्यालय, महाविद्यालय और लंदन के वास्तव में अनेक लोगों को जुटाने वाले सावरकरजी अब किसी बड़े कार्यक्रम के बाद एकान्तवास पसंद करते थे। दूसरे दिन प्रातः चाय की व्यवस्था की देखभाल डाक्टर साहब ने की। चाय पर सावरकरजी ने डॉक्टर साहब से पूछा कि रात्रि को कब तक बैठक चली तो उन्होंने कहा यही कोई डेढ़ दो बजे तक। डॉक्टर साहब को उनका यह गीत बहुत प्रिय था—

घनश्याम श्रीराम का मूढ होता कराया स्वमाता मही दास्यमुक्ता।
स्वराज्येच्छूनी पाहिजे युद्ध केले रणावीण स्वातंत्र्य कोणा मिळाले॥

सारे संघ की रचना उन्होंने इसी को ध्यान में रखकर की थी। राजनीति से अलग रहकर शक्ति निर्माण करने की ओर उनका लक्ष था। स्वयंसेवकों को घुड़सवारी, लक्ष्यवेध, तैरना आदि आना चाहिए ऐसी उनकी इच्छा थी। संघ स्थापना जब उन्होंने की थी तभी उन्हें लगने लगा था कि १२-१५ साल बाद युद्ध होगा। इसे वे भारत के लिए सुअवसर समझते थे और उसके पूर्व देश भर में एक तरुण शक्ति संगठित हो जाये ऐसा उनका प्रयत्न था। वे कई बार कहा करते थे कि संघ कार्य शुरू होने में दस साल की देरी हो गयी। कई बार काम में देरी होते देखकर वे रात-रात भर रोते भी थे। कई रात उन्हें नींद नहीं आती थी। उसी मानसिक अवस्था में उन्होंने शहरों में ३ प्रतिशत और ग्रामों में १ प्रतिशत पूर्ण गणवेषधारी स्वयंसेवक खड़े करने की बात कही थी। अप्पाजी जोशी से वे अनेक बार अपने मन की बेचैनी बताया करते थे। डाक्टर साहब के मन में सावरकरजी के समान बचपन से ही स्वातंत्र्य लालसा थी यह सुविदित है। प्रथम महायुद्ध के समय उन्हें पता लगा कि भारत में अंग्रेजों की सेना केवल २००० की रह गई है। तभी उन्होंने डाक्टर मुंजे से कहा था कि क्यों न अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी जाये। किन्तु डाक्टर मुंजे इससे सहमत नहीं थे। इसलिए उस दिशा में आगे बढ़ा नहीं जा सका। उसी के आसपास उनके मन में यह विचार उठने लगा कि देश के नवयुवकों की शक्ति खड़ी करनी चाहिए।

डाक्टर साहब रत्नागिरी में सावरकर जी से मिलने गये थे। उन्होंने 'याचि देही याचि डोळा' जो कहा था उसकी पृष्ठभूमि में विश्वयुद्ध होगा, उस अवसर का उपयोग कर हम अंग्रेजी राज्य को उखाड़ फेकेंगे यह भावना अवश्य काम कर रही थी। इसी देह में इन्हीं आंखों से देश को पूर्ण स्वतंत्र देखने की उनकी लालसा अवश्य उनके मन में थी।

वास्तविक सम्पत्ति

किसी गाँव में एक साहूकार था। लोग उसके पास ब्याज पर पैसा उधार लेने आते थे। लालची साहूकार हिसाब में गड़बड़ी कर किसानों से उनकी जमीन ऐंठ लेता था। इस प्रकार धोखे से वह अत्यन्त धनवान बन चुका था। एक बार महात्मा बुद्ध उस सेठ के पास पहुँचे और कहा : 'सेठ जी, मेरे पास यह एक सुई है मेरे जीवन का कोई भरोसा नहीं, मैं कभी भी मर सकता हूँ। इसलिए आप इसे अपने पास गिरवी रख लें। मरने के बाद जब आप भगवान के पास जाएंगे, मैं वहीं आपसे अपनी अमानत वापस ले लूंगा।' साहूकार यह सुनकर क्रोधित होते हुए बोला, 'मरने के बाद मैं सुई को कैसे साथ ले जा सकता हूँ?' यह सुनकर महात्मा बुद्ध मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए बोलेः 'सेठ जी, जब आप इतनी छोटी सी सुई साथ नहीं ले जा सकते, तो इतनी सम्पत्ति जो आपने धोखे से कमाई है उसे किस प्रकार ले जाएंगे।' इतना सुनते ही साहूकार के मन में ज्ञान का उदय हुआ और वह महात्मा बुद्ध के चरणों में गिरकर माफी मांगने लगा। बुद्ध ने उसे समझाया, सेठ जी, मनुष्य की वास्तविक सम्पत्ति तो उसके सत्कर्म हैं और केवल वही मनुष्य के साथ जाते हैं।'

—ललिता अग्रवाल

जनज्ञान मासिक मंगाने के नियम

१. 'जनज्ञान' के पाठक पत्र व्यवहार करते समय अपनी सदस्य संख्या अवश्य लिखें। (सदस्य संख्या 'जनज्ञान' के रैपर पर लिखे पते पर साथ अंकित रहती है।)
२. 'जनज्ञान' प्रतिमाह पांच और छः तारीख को पाठकों को भेज दिया जाता है।
३. मास के अन्त तक 'जनज्ञान' न मिले तो शिकायत आने पर दोबारा भेज दिया जाता है।
४. 'जनज्ञान' की एक प्रति का मूल्य छः रुपये है। वार्षिक शुल्क साठ रुपये है। आजीवन शुल्क ५०१ रुपये है।
५. शुल्क समाप्ति की सूचना प्रत्येक सदस्य को एक मास पहले भेज दी जाती है। पत्र के साथ मनीआर्डर फार्म और पोस्टकार्ड संलग्न होता है। कृपया पोस्ट कार्ड पर उत्तर अवश्य दें।
६. आगामी वर्ष के लिए नया शुल्क मनीआर्डर न मिलने पर अगला अंक वार्षिक शुल्क के साथ वी०पी० द्वारा भेजा जाता है। वी०पी० में ९ रु० ५० पैसे का डाक व्यय अतिरिक्त लगता है। जिसका लाभ न तो सदस्यों को और न ही संस्था को होता है। अतः उत्तर तुरन्त देने की कृपा करें।

—सम्पादक

प्रथम बार वीर सावरकर के दर्शन का प्रेरक क्षण

❑ गोपाल गोडसे

वर्ष १९२१ में सावरकर बन्धुओं को अंडमान (कालापानी) से हिन्दुस्थान लाया गया। दो वर्ष बंदीगृह में रखने के पश्चात उन्हें कुछ बंधनों पर मुक्त किया गया। वीर सावरकर को रत्नागिरी में रहने का आदेश हुआ। रत्नागिरी महाराष्ट्र के पश्चिम में समुद्र के तट पर बसा नगर है। मुंबई के दक्षिण में सावरकर जी पर बन्धन यह था कि उन्हें रत्नागिरी जनपद से बाहर जाने के लिए जनपदाधिकारी की अनुमति लेनी होगी। दूसरा बन्धन था कि वह राजनीति में किसी भी प्रकार सम्मिलित नहीं होंगे। वे उस विषय पर न लेख लिखेंगे न व्याख्यान देंगे और न वक्तव्य देंगे।

सावरकर जी ने देश की स्वाधीनता के विषय में गहन चिंतन किया था। संस्कृति समेत जनसाधारण की विशिष्ट भूखंड में मुक्ति इसका अर्थ स्वराज्य है, स्वतंत्रता है, यह उनके चिंतन का निचोड़ था। हिन्दुस्थान में जिस जन साधारण के लिए स्वाधीनता का प्रयास करना है वह हिन्दू समाज है, कि जिसकी अपनी एक उच्च संस्कृति है, जिसका प्राचीन काल से चलता आया गौरवशाली इतिहास है और विश्व को आज भी देने योग्य जिसके पास 'योग' का ज्ञान है। उसके अतिरिक्त राष्ट्रीयत्व का मुख्य घटक यह है कि वे यहीं के निवासी हैं। आज ही नहीं, अनेक पीढ़ियों से। अतएव उनकी मुक्ति उनकी अपनी संस्कृति की सुरक्षा के साथ इसी को हिन्दुस्थान की स्वाधीनता माना जाएगा। यह सावरकर जी का विचार उन्होंने 'हिन्दुत्व' ग्रंथ में १९२३ में प्रकट किया। पुस्तक में राजनीतिक विषयों पर चर्चा एवं विवरण होना अनिवार्य था। अतः प्रथम संस्करण वीर सावरकर जी के अनुज डॉ० नारायण राव सावरकर के नाम से प्रकाशित हुआ।

जैसा कि पहले कहा है, राजनीति के विषय में कोई चर्चा अथवा भाषण नहीं करना यह वीर सावरकरजी पर बंधन था। १९३१ के जुलाई २२ को पुणे में फर्ग्युसन महाविद्यालय में मुम्बई प्रदेश के गवर्नर हॉटसन महाविद्यालय के समारोह में अध्यक्ष के रूप में उपस्थित थे। उस समय एक छात्र वासुदेव बलवंत गोगटे ने उन पर गोली दागी। अन्दर कवच होने के कारण गोली हॉटसन के शरीर में नहीं घुसी। बताया गया की गोली जेब की घड़ी को लगी। गोगटे को पकड़ लिया गया। उन पर अभियोग चला और उन्हें सात वर्ष का कठोर कारावास दिया गया।

रत्नागिरी में वीर सावरकर सभाओं में व्याख्यान दिया करते थे किन्तु राजनीति विषयों को छोड़कर। आरक्षी दल उनके भाषण के प्रति सदा सजग रहता था। हॉटसन प्रकरण के पश्चात एक दिन सावरकर जी ने कंस वध संबंधी आख्यान को लेकर एक व्याख्यान दिया। भाषण में उन्होंने यह उल्लेख किया कि वासुदेव बलवन्त था अर्थात श्रीकृष्ण शक्तिमान था। ऐसा उल्लेख कर उन्होंने उन दिनों घटी घटना की लोगों के मन में स्मृति करा दी और वासुदेव बलवन्त गोगटे की उसके प्रयास को लेकर सराहना की। सावरकर जी के भाषण से श्रोता विभोर हो उठे।

संयोगवश मैं स्वयं उस सभा में एक श्रोता था। मेरी अवस्था १२ वर्ष की थी। मैं मराठी चौथी कक्षा के पश्चात अंग्रेजी की पहली कक्षा में प्रवेश कर चुका था। हमारा निवास उसी मार्ग पर था जहां उक्त सभा एक मन्दिर में हुई थी। ऐसी छोटी अवस्था में ग्रहण करने की क्षमता की सीमा के अन्तर्गत मैं भी उस भाषण से प्रभावित हुआ था। मेरे पिताजी उस समय रत्नागिरी के पत्रालय में नियुक्त थे।

दूसरे दिन आरक्षी दल के विशिष्ट विद्वान अधिकारी सावरकर जी के घर गये। उन्होंने आरोप लगाया कि आपने बंधन तोड़ा है। अपने भाषण में वासुदेव बलवन्त गोगटे की प्रशंसा की है।

सावरकर जी ने उत्तर दिया— यह गोगटे शब्द आपने लगाया है। मेरे भाषण में वह शब्द भी नहीं था और वासुदेव बलवन्त गोगटे की सराहना भी नहीं थी। आपके पास लघु लिपिक होते हैं। उनसे मेरा भाषण संपूर्ण लिखवाइए। यह हमारी चर्चा का आधार रहेगा।

शासकीय विद्वान यह भलीभांति जानते थे कि वादविवाद में सावरकर जी को वे हरा नहीं पायेंगे। उन्होंने और एक उपाय का उपयोग किया। वरिष्ठ अधिकारी बोले "आपके कहने के अनुसार आपने गोगटे की सराहना नहीं की। अतः आप एक समाचार पत्र विज्ञप्ति प्रसारित करें कि आप गोगटे की निन्दा करते हैं।

सावरकर जी ने तत्काल कहा कि क्या मुझे दोबारा अंडमान भेजना चाहते हैं? आपने मुझ पर बंधन लगाया है कि राजनीति विषय पर मुझे कोई वक्तव्य नहीं देना है विज्ञप्ति से नियम भंग हो जाएगा। मैं इस प्रकार अपने आपको संकट में डालने का इच्छुक नहीं हूं। सावरकर जी से बौद्धिक टक्कर लेना सुगम नहीं था वे अधिकारी वहां से चले गये किन्तु मन ही मन सावरकर जी की अलौकिक बुद्धिमत्ता की सराहना करते हुये।❑

जब महान आर्य समाजी संन्यासी आत्मानन्द जी ने वीर सावरकर के चरण छुए

❑ पं० इन्द्रराज

गुरुकुल पोठोहार (रावलपिण्डी, इस समय पाकिस्तान की राजधानी) में श्रद्धेय गुरुदेव आचार्य पं० मुक्तिराम जी उपाध्याय (स्वामी आत्मानन्द जी) के चरणों में रहकर विद्याध्ययन का सुअवसर प्राप्त हुआ। एक भव्य मूर्ति, एक गम्भीर व्यक्तित्व, परम दार्शनिक, आदित्य ब्रह्मचारी, अत्यन्त विनम्र, परम त्यागी, तपःपूत लालिमा से युक्त सुन्दर ललाट से सुशोभित, नेत्रों में दिव्य ज्योति से युक्त, महान आचार्य, योगीराज जी से शिक्षादीक्षा प्राप्त हुई। गुरुकुल में विद्याध्ययन के समय आचार्य श्री का पढ़ाना उनकी योग मुद्रा उनकी परम साधना सारे गुरुकुल को आलोकित करती थी। बहुत दूर-दूर से गरीब और अमीर उनका दर्शन लाभ करने के लिए उनके चरणों में आते थे। जहां गुरुकुल बसा हुआ था वहां ५ प्रतिशत हिन्दू और ९५ प्रतिशत मुसलमान रहते थे। श्रद्धेय आचार्य जी अपनी भेदभाव रहित निष्काम सेवा के कारण उस क्षेत्र में पीर माने जाते थे। हिन्दू तो श्रद्धा रखते ही थे परन्तु मुसलमान भी उनमें अटूट श्रद्धा रखते थे।

लोग भक्तिभाव एवं श्रद्धा से युक्त होकर स्वामी आत्मानन्द जी की सेवा में उपस्थित होकर उनको नमस्कार करते थे और आशीर्वाद लेते थे। मुसलमान हो या हिन्दू सबके प्रति एक जैसा व्यवहार और सबको सहज भाव से आशीर्वाद मिलता था। आचार्य श्री अपने समय में अजातशत्रु के नाम से प्रसिद्ध थे। गुरुकुल के छोटे-बड़े लगभग १५० ब्रह्मचारी प्रातःकाल उठकर श्री चरणों का स्पर्श कर आशीर्वाद लेते थे तथा रात्रि को भी चरण स्पर्श कर शयन करते थे।

हैदराबाद सत्याग्रह में सक्रिय भूमिका आचार्य श्री की थी। पाकिस्तान बनने के बाद १९५७ में हिन्दी आन्दोलन के वे सर्वाधिकारी थे। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान के आसन को आचार्य श्री ने सुशोभित किया था। उनकी वक्तृता तो एक जादू था। ओजस्वी वाणी से जब राष्ट्रीय विचारधारा का प्रवाह बहता था तो लगता था कि सर्वत्र राष्ट्रीय विचार फैल गए हैं। उनकी सत्यनिष्ठ वाणी से जब अध्यात्म की अजस्र धारा बहती थी तो लगता था किआनन्द की वर्षा हो रही है।

एक बार स्वामी जी को विदित हुआ कि वीर सावरकर जी कोहमटी रावलपिण्डी आ रहे हैं। उन्होंने हम सब ब्रह्मचारियों को सड़क के दोनों ओर पंक्तिबद्ध खड़ा कर दिया तथा वीर सावरकर जी की प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर में वीर सावरकर जी की कार रुकी। एक श्वेत वस्त्रधारी महान् पुरुष कार से नीचे उतरा। हम ब्रह्मचारियों को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि गेरवे वस्त्रधारी हमारे गुरुदेव जी ने श्वेत वस्त्रधारी वीर सावरकर जी के चरण स्पर्श कर लिए। हम सब आश्चर्य चकित हो गए। प्रथम बार हमने किसी संन्यासी को श्वेत वस्त्रधारी के सामने झुकते देखा था। बाद में आचार्य प्रवर ने वीर सावरकर जी के त्याग-तपस्या और बलिदान की गाथा सुनाई जो बड़ी रोमांचक और प्रेरणादायी थी। ❑

श्री जगदीश चन्द्र का निधन

धर्मात्मा श्री जगदीश चन्द्र जी कुमार सी-१४९ नरैना विहार, दिल्ली का कुछ समय पूर्व देहावसान हो गया। वे स्वभाव से विनम्र, कर्म से चरित्रवान् तथा गुणों से साधुनिष्ठ पुरुष थे। व्यापार में उनका धनागम अर्थ शुचिता के लिये प्रसिद्ध था। उनकेनिधन से अनेकधार्मिक संस्थानों की महती क्षति हुई है। वे निर्धन और अनाथों के सहायक थे। वे अपनी धर्मपरायणा धर्मपत्नी के साथ एक पुत्र, दो पौत्र, पुत्रवधू एवं तीन कन्याएं छोड़ गये हैं-

धर्मात्मा देवतात्मा च, दीनानामुपकारवान।
स जगदीशचन्द्रस्तु, ब्रह्मलोके महीयते॥

सच्चिदानन्द भगवान् उन्हें अपना आश्रय प्रदान करें। परिवार धैर्य धारण करे। दयानन्द संस्थान और जनज्ञान परिवार उनके दुख में सहभागी है।

राकेशरानी सम्पादक

महान दूरदर्शी थे वीर सावरकर

❑ वसन्त कृष्ण ओक

वीर सावरकर जी के संबंध में, उनके व्यक्तित्व के विषय में सुना बहुत था परन्तु उनके दर्शन करने का सौभाग्य नहीं मिला था। इधर मैं संघ कार्य के निमित्त १९३६ के नवम्बर मास में दिल्ली आ गया था। प्रारम्भ में मैं हिन्दू सभा के आश्रम में ही रहता था। हिन्दु महासभा के तत्कालीन अखिल भारतीय कार्यालय मंत्री श्री गणपत राय से मेरी घनिष्ठता थी। तभी सम्भवतया १९३७ के दिसम्बर मास में हिन्दू महासभा अधिवेशन अहमदाबाद में आयोजित किया था। मेरी स्वयं की वहां जाने की उत्सुकता थी तथा श्री गणपत राय जी ने अहमदाबाद चलने का आग्रह किया और हम अहमदाबाद चले गए।

श्री सावरकरजी ने अध्यक्षीय भाषण में अपनी ओजस्वी एवं प्रभावी वाणी में अपनी व हिन्दू महासभा की भूमिका स्पष्ट शब्दों में रखते हुए कहा था "यदि तुम साथ आओगे तो तुम्हें साथ लेकर, यदि नहीं आते तो तुम्हारे बगैर और यदि तुम विरोध करते हो तो तुम्हारे विरोध के बावजूद हिन्दू राष्ट्र अपना मार्ग प्रशस्त करता हुआ अपना ध्येय प्राप्त करके रहेगा।" यह उन्होंने उस समय कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टीकरण नीति की ओर इशारा करते हुए कहा था। मैंने अनुभव किया कि उनके इस ओजस्वी वक्तव्य की देश भर में अपील हुई। सावरकरजी मुस्लिम तुष्टीकरण के विरोधी थे परन्तु मुसलमानों के नहीं। अतः सावरकर जी जब लाहौर गए तब सिकन्दर हयात खान, जो उनके मित्र तथा लंदन में सहपाठी भी थे, ने उनका स्वागत किया।

जिस प्रकार किसी व्यक्ति की तेजस्विता हेतु कुण्डलिनी शक्ति का जागृत होना आवश्यक है उसी प्रकार राष्ट्र के तेजस्वी, सामर्थ्यशाली व शक्तिवान होने के लिए उसकी कुण्डलिनी जागृत होना अपरिहार्य है। अतः हिन्दुओं की ध्वजा, कृपाण और कुण्डलिनी चिह्नों से अंकित हो ऐसा प्रतिपादन सावरकरजी ने हिन्दू महासभा के मंच से किया। उनका मानना था कि कृपाण और कुण्डलिनी शक्ति और शांति, भोग और योग, आचार और विचार, कर्म और ज्ञान, प्रवृत्ति और निवृत्ति का सुन्दर संगम है। पहली बार उक्त विचार सुनकर अनुभव हुआ कि ऐसी बात वही व्यक्ति कह सकता है कि जिसकी स्वयं की कुण्डलिनी जागृत हो।

सावरकरजी इतने प्रसिद्ध होते हुए भी ऐसे सामान्य लगते थे कि जिन्होंने उन्हें देखा नहीं वे आसानी से पहचान ही नहीं पाता थे। अहमदाबाद अधिवेशन के पश्चात सावरकरजी का दिल्ली आगमन हुआ। दिल्लीवासियों में सावरकरजी को लेकर कौतूहल था कि जो व्यक्ति समुद्र में कूदकर तैरता हुआ पार लग सकता है उसकी काया तो अवश्य ही बलिष्ठ होगी। स्टेशन से उनकी भव्य शोभा यात्रा निकाली गई। घोड़ेवाली बग्घी में सावरकरजी को बैठाया गया। उनके साथ सत्कार समिति की ओर से उनके लंदन के साथी बैरिस्टर श्रीराम बैठे थे। आगे कोचवान के साथ बम्बई के संघ के कार्यकर्ता श्री दादा साहब नायक बैठे थे। उनकी काया हृष्टपुष्ट थी। जैसे ही शोभा यात्रा सड़कों पर से गुजरी तो दिल्ली वासियों ने दादासाहब नायक को ही सावरकरजी मानकर उनकी ओर इशारा करते हुए जयकार के नारे लगाने शुरू किए। बाद में बताने पर लोगों को पता चला कि पीछे की ओर बैठा हुआ छोटे पतले शरीर वाला व्यक्ति जिसकी आंखों में चमक झलक रही है वही वीर सावरकर है।

सावरकरजी के स्वभाव में यह गुण था कि किसी बात से असहमत होते हुए भी राष्ट्रीय हित में वह अपना समर्थन और आशीर्वाद अवश्य देते थे। 'गोवा मुक्ति आन्दोलन' के निमित्त १९५५ में सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया था। हम लोग सावरकरजी से आशीर्वाद मांगने गए। सावरकरजी बोले "मैं तो इस प्रकार के सत्याग्रह के विरुद्ध हूं। मुझे प्रसन्नता होती यदि आप लोग हाथ में बन्दूक लेकर गोवा पर चढ़ाई करते और विजयश्री प्राप्त करते, परन्तु कोई बात नहीं आप लोग एक अच्छा काम करने जा रहे हैं। अतः मेरा आशीर्वाद आपके साथ है। आप विजयी हों ऐसी मेरी कामना है।" इसी प्रकार हिन्दू महासभा का नागपुर में अधिवेशन था। उन दिनों निजाम हैदराबाद के विरुद्ध आर्यसमाज का सत्याग्रह चल रहा था। सावरकरजी ने उस मौके पर इतना प्रभावी व जोशीला भाषण दिया कि हजारों लोग इस सत्याग्रह में जाने के लिए उद्यत हो गए।

उनके सम्बोधनों में मुख्यतया स्वातंत्र्य देवता (लक्ष्मी)

का ही वंदन हुआ करता था। १८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य संग्राम की शताब्दी के अवसर पर दिल्ली में एक भव्य कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इसमें स्वातंत्र्य वीर सावरकर जी को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। इस अवसर पर सावरकर जी ने बार-बार स्वातंत्र्य लक्ष्मी का जय-जयकार किया। रामलीला मैदान में आयोजित समारोह में सावरकर जी ने १८५७ के संग्राम को गदर न कह कर 'स्वातंत्र्य समर' कहा। उनकी मान्यता थी कि देश स्वतंत्र हुआ इसकी हम इज्जत करते हैं परन्तु जब तक अखंड भारत स्वतंत्र नहीं होता तब तक मेरे मन को शान्ति नहीं मिलेगी। मैं इस लक्ष्य को ले कर रहूंगा चाहे जिन्दा बचूं या नहीं।

इसी अवसर पर उस समय जीवित क्रान्तिकारियों व उनके परिवार जनों को एक समारोह में बुलाया था। आजादी के परवानों का यह सम्मेलन कांस्टिट्यूशन क्लब में हुआ था। मुझे स्मरण है कि शहीद भगत सिंह जी की मां को देखकर सावरकर जी जैसे वज्र हृदय के आंसू टपक पड़े परन्तु यह आंसू स्वाभिमान के थे और सावरकर जी ने शहीद माता के दर्शन कर स्वयं को धन्य समझा।

सावरकर जी का हिन्दुओं की वैयक्तिक और सामाजिक आचार और औपचारिकता में विश्वास नहीं था। एक बार प्रसिद्ध संत तुकडोजी के साथ सावरकर जी सहभोज कर रहे थे। तुकडोजी महाराज ने भोजन ग्रहण करने से पूर्व 'आहुति' दी पर सावरकर जी ने ऐसा नहीं किया। इस पर आश्चर्य चकित संत ने पूछा आपने ऐसा क्यों नहीं किया। सावरकर जी ने कहा कि इसमें मेरा विश्वास नहीं। वैसे भी जिस व्यक्ति ने अपना सर्वस्व हिन्दू राष्ट्र के लिए बलिदान कर दिया हो तो वह जीवन की बाह्य औपचारिकता को भला क्या मानता। मैंने अनुभव किया कि उसका जीवन स्वयं एक यज्ञ कुण्ड था। यद्यपि वे जन्म से ब्राह्मण थे परन्तु उनका विश्वास हिन्दू समाज की एकता और समरसता पर पूर्णरूप से था। वे किसी प्रकार के जाति भेद को नहीं मानते थे। उनके जीवन का शास्त्रीय दृष्टिकोण था। आधुनिकता, वैज्ञानिक और सनातन हिन्दुत्व की प्रेरणा और अभिमान इन सबका बड़ा ही मधुर और तेजस्वी मिश्रण उनके जीवन में था। सावरकरजी का जीवन् के प्रति दृष्टिकोण शुद्ध वैज्ञानिक था। वे हिन्दुत्व को धार्मिक दृष्टि से अधिक राष्ट्रीय दृष्टिं से देखते थे। इसीलिए हिन्दुत्व व राष्ट्रीयत्व उनकी दृष्टि में एक ही थे। हिन्दुओं का राष्ट्रीयकरण और राष्ट्र का सैनिकीकरण यही उनका राष्ट्रीय संदेश था।

इस महापुरुष की मृत्यु भी उसके गौरव पूर्ण त्यागमय राष्ट्रार्पण जीवन के अनुरूप ही थी। यह बात जीवन के अन्त में उनके द्वारा लिखे हुए लेख 'आत्मसमर्पण' द्वारा सिद्ध होती है। उनके द्वारा किया हुआ आत्मसमर्पण उन्हें शंकराचार्य, संत ज्ञानेश्वर आदि महापुरुषों की कोटि में ले जाता है। इस महापुरुष के प्रति मेरा विनम्र अभिवादन। ❑

"जन-ज्ञान" प्रसार अभियान में योगदान
ऋषि भक्तों-हिन्दुत्वनिष्ठों से आह्वान

* जनज्ञान मात्र एक पत्रिका ही नहीं अपितु आन्दोलन है।
* राष्ट्रद्रोही तत्वों के षडयन्त्रों का भण्डाफोड़ और राष्ट्रभक्तों को सुस्पष्ट समर्थन ही हमारी नीति है।
* देव दयानन्द की विचारधारा का प्रचार-प्रसार हमारा संकल्प है।
* "सत्य के अर्थ" का प्रकाश हमारा व्रत है।
* वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्व की मानव कल्याणकारिणी विचारधारा के हम प्रसारक हैं।
* राष्ट्र की एकता और अखण्डता तथा सुरक्षा के लिए जन-जागरण ही हमारा कार्यक्रम है।
* "जनज्ञान" व्यवसायिक नहीं एक वैचारिक मासिक पत्रिका है। वार्षिक शुल्क ६० रुपये है।
* अपने प्रतिष्ठान का विज्ञापन देकर हमारा सहयोग करें।

आपका सहयोग ही जनज्ञान का सम्बल है। हमारा आप सब कृपालु पाठकों से आह्वान है कि राष्ट्रनिर्माण के इस अनुष्ठान को गतिमान रखने के लिए अपने सहयोग का हाथ और बढ़ाएं। जनज्ञान को घर-घर में पहुँचाकर वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्वनिष्ठा का प्रकाश फैलाएं।

अपने नगर में जनज्ञान की एजेन्सी स्थापित करें। नियम पत्र मंगायें।

कार्यालय : २२८६ आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-११० ००५ दूरभाष : ५७२४७४१

जब सावरकर जी की शोभायात्रा ने जिन्ना के जुलूस को मात दी

❑ ओमप्रकाश कपड़े वाले

स्वातन्त्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर को १९३७ में कर्णावती (अहमदाबाद) में हिन्दू महासभा अधिवेशन की अध्यक्षता के बाद भारत की राजधानी में हिन्दू जनता ने अपने प्रिय नेता के अभिनन्दन का निश्चय किया। हिन्दू महासभा के प्रयास से एक स्वागत समिति का गठन किया गया, जिसमें राजधानी में विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्ट स्थान रखने वाले अनेक नागरिकों का समावेश था।

यह भी एक संयोग ही कहा जा सकता है कि मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना का विशाल जलूस वीर सावरकर के राजधानी आगमन से कुछ ही समय पूर्व निकला था। मैं उन दिनों बालक था। किन्तु बाल्यकाल से ही मेरे मन में सार्वजनिक जीवन केप्रति सहज रुचि थी। उसी से प्रेरित होकर मैं उन दिनों आयोजित होने वाले सार्वजनिक कार्यक्रमों में दर्शक के नाते उपस्थित रहता था। मैंने मिस्टर जिन्ना का जलूस देखा तो अनेक लोगों को यह कहते हुए सुना कि इतना विशाल जलूस राजधानी में इससे पूर्व किसी नेता का नहीं निकला।

किन्तु जब सावरकर राजधानी आए तो हिन्दू राष्ट्रवाद के मंत्रदृष्टा के दर्शनार्थ राजधानी के आबाल वृद्ध नर-नारी उमड़ पड़े। उस अवसर पर वीर सावरकर को एक सुसज्जित वाहन में बैठाकर उनकी शोभायात्रा निकाली गयी। इतनी सुविशाल थी वह शोभायात्रा किहर कंठ से जहां वीर सावरकर अमर रहे का उद्घोष गूंजा और हिन्दू राष्ट्र की जयनाद, वहीं सर्वत्र यह भी सुना गया कि वीर सावरकर की शोभायात्रा ने मिस्टर जिन्ना के जलूस को मात दे दी है। वह दृस्य आज भी अनेकबार मेरी स्मृतियों में उभर उठता है। सोचता हूं क्या प्रभु इस हत् भाग्य हिन्दू जाति को वह प्रेरणा देगा कि वह छद्म धर्मरिपेक्षता की भ्रांति से मुक्त होकर हिन्दू राष्ट्रवाद के उस महान मंत्र को अपने जीवन का दर्शन बनाएगी, जिसका तेजस्वी स्वरूप इस महिमामयी मातृभूमि को वह सबल और सशक्त रूप प्रदान करेगा, जिसके 'कृणवन्तो विश्वमार्यम्' के संदेश पर विश्व ध्यान देगा।

मैंने गांधी मैदान की विशाल सभा में वीर सावरकर का प्रथम भाषण सुना तो मुझे ऐसा आभास हुआ कोई युगदृष्टा ऋषि वैदिक धर्म की महत्ता के साथ ही साथ हिन्दू राष्ट्रवाद के महामंत्र की ऐसी विशद् व्याख्या कर रहा है। उनके एक-एक शब्द में वह ओज था कि जो श्रोता में नव चैतन्य का सृजन कर रहा था।

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर उसके कुछ वर्ष बाद पुनः दिल्ली पधारे तो उस बार भी गांधी मैदान में ही उनके भाषण का आयोजन किया गया। उन दिनों गांधी मैदान राजधानी के सुविशाल मैदानों में से एक था। उस सभा में वीर सावरकर के भाषण का विषय था हिन्दुस्थान हिन्दुओं का। इस सभा के अध्यक्ष थे आर्य जगत के तेजस्वी विद्वान शास्त्रार्थ महारथी पंडित रामचन्द्र देहलवी।

वीर सावरकर के भाषण में तर्क था तो उनके गहन अध्ययन और इतिहास ज्ञान की पुण्य सलिला का प्रवाह भी। अब भी मन में बार-बार यह कल्पना उठती रहती है काश! हमने वीर सावरकर की चेतावनियों को सुना होता। यह राष्ट्र इतिहास के उस व्याख्याकार ही नहीं अपितु निर्माता की चेतावनियों पर यदि ध्यान देता तो यह अडिग विश्वास है कि **सुजलाम्, सुफलाम्, वरदाम** भारत माता के विभाजन का दुखद क्षण इस राष्ट्र के इतिहास में कदापि स्थान नहीं पाता।

आर्य समाज नया बांस, दिल्ली

हे कल्याण की इच्छा करने वाले पुरुष! जो मैं अकेला हूँ, ऐसा अपने आत्मा में जानकर-मिथ्या बोलता है, सो ठीक नहीं है। किन्तु जो दूसरा तेरे हृदय में अन्तर्यामी रूप से परमेश्वर पाप-पुण्य को देखने वाला मुनि स्थित है, उस परमात्मा से सदा डरकर सदा सत्य बोला कर!

क्योंकि

झूठ बोलने वाले को न मित्र मिलता है न यश। जब कोई मिथ्या भाषण, चोरी आदि की इच्छा करता है, तब उसकी आत्मा में भय, शंका वा लज्जा उत्पन्न होता है। इसलिए वह कर्म करने योग्य नहीं। जिस-जिस कर्म में अपनी आत्मा प्रसन्न रहे और उत्साह बढ़े उन-उन कर्मों का सेवन करना उचित है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

लाहौर में वीर सावरकर के दर्शन

❑ इन्द्रसेन शर्मा

कर्णावती (अहमदाबाद) में हिन्दू महासभा अधिवेशन की अध्यक्षता करने के बाद १९३६ में ही वीर विनायक दामोदर सावरकर ने देशव्यापी प्रवास किया था। उसी क्रम में वे लाहौर भी आए थे। गुरुदत्त भवन में मैंने अपने जीवन में पहली बार उस युग पुरुष के दर्शन करने का सौभाग्य पाया था। उन दिनों में किशोर आयु का एक जिज्ञासु छात्र था। उनका भाषण सुना, हिन्दू राष्ट्रवाद के उस उद्गाता के विचारों में मुझे उस युग के गीता ज्ञान जैसा ही आभास हुआ। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का तब तक पंजाब में कार्य आरम्भिक अवस्था में ही था, जिसका श्रेय हिन्दू महासभा के महान नेता देवता स्वरूप भाई परमानन्द को था। वीर सावरकर के उद्बोधन से प्रेरित होकर मैं हिन्दू महासभा के प्रति आकृष्ट हुआ और संघ के प्रति भी मेरा झुकाव रहा।

देश विभाजन के बाद लाहौर को छोड़कर मैं अम्बाला आया और वहां हिन्दू महासभा के संगठन को शक्तिशाली बनाने में मैंने यथाशक्ति योगदान दिया। सन् १९५० में पुणे में हुए हिन्दू महासभा अधिवेशन में भाग लेने के लिए मैं भी अनेक सहयोगियों के साथ वहां गया था। उस अवसर का उपयोग मैंने मुम्बई में स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के दर्शन हेतु भी किया। हिन्दू महासभा के तेजस्वी नेता प्रो० ओम प्रकाश काहोल और प्रोफेसर मनोहर लाल के साथ स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के दर्शन करने का जो सुअवसर मिला वह मेरे जीवन की अविस्मरणीय स्मृति बना रहा है।

उस अवसर पर विचार-विमर्श के दौरान स्वातन्त्र्य वीर सावरकर ने पंजाब की भाषा समस्या पर अपने जो विचार व्यक्त किए और मार्ग दर्शन दिया उसका सार यह था कि पंजाब के हिन्दुओं को एक प्रांतीय भाषा के रूप में पंजाबी को अपनी भाषा स्वीकार कर लेनी चाहिए। ऐसा होने से विघ्न संतोषी तत्वों के अपावन इरादे असफल हो जाएंगे जो हिन्दी-पंजाबी विवाद को उभार कर हिन्दुओं और सिखों के बीच मतभेद की दीवारें खड़ा करना चाहते हैं। हिन्दुत्व की व्यापक व्याख्या उन दिनों के महान अकाली नेता मास्टर तारा सिंह को भी स्वीकार थी। वे कलकत्ता में हुए हिन्दू महासभा अधिवेशन के समान पुणे में १९५० में संपन्न हुए हिन्दू महासभा अधिवेशन में उपस्थित रहे थे।

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर का जहां पंजाब के लोगों से पंजाबी को अपनी भाषा के रूप में स्वीकार करने का आग्रह था, वहीं उनका पंजाब के हिन्दुओं को यह भी परामर्श था कि पंजाबी की लिपि के रूप में यदि देवनागरी को भी व्यवहार में लाएं। सोचता हूं कि यदि पंजाब के हिन्दुओं ने, जिनकी शिक्षा-दीक्षा में तब उर्दू का वर्चस्व था, यदि पंजाबी भाषा को हृदय से मान्य किया होता और उसके लिए देवनागरी लिपि को व्यवहार में लाया गया होता तो हिन्दू राष्ट्र की सशक्त भुजा अर्थात सिखों में अलगाव का भाव पनप ही नहीं पाता।

९०, विनोबापुरी, दिल्ली

(पृष्ठ १३ का शेष)

अनुभूति होती है। तथा जब कोई अच्छा काम करते हैं तो उत्साह, यह सब वास्तव में ईश्वरीय अनुभूतियां हैं। धार्मिक जगत् में जबसे यह प्रावधान किया गया है तभी से मनुष्य जगत में आसुरी वृत्तियों ने अपना सम्राज्य स्थापित कर लिया है। दूसरे भगवान को भोग लगाने की प्रथा जब से चली है तभी से मनुष्य भूखा मरने लगा है लोग दूध चढ़ा कर नाली में बहा कर सड़ांध उत्पन्न करेंगे तो बच्चों के मुंह से दूध छिनेगा ही। अगर हम ईश्वर को सर्वव्यापक मान कर उसकी अनुभूति में यह प्रार्थना करें, हे दयानिधे! आपकी अपार कृपा से हम, असत् से सत् की ओर अज्ञान अंधकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमृत पथ की ओर बढ़ते हुए सत्कर्म करते हुए यज्ञमय जीवन बना कर आपकी छाया में रहें। हम आपके 'अमृत पुत्र' बन कर आपके गुणों को धारण करें।

स्वराज्यम् से बात प्रारम्भ हुई थी इस शब्द से मेरी धारणा बनी है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इसी शब्द का प्रयोग सत्यार्थ प्रकाश में 'स्वराज्य' के रूप में किया जिससे प्रेरणा पाकर श्याम जी कृष्ण वर्मा, बाल गंगाधर तिलक, तथा हजारों अन्य राष्ट्र भक्तों ने इस 'स्वराज्य' शब्द के लिए अपने जीवन की आहुति दी। किन्तु वैदिक पथ से उभरा यह राष्ट्र अपने हर नागरिक को 'स्वराज्य' की खीर कब पहुंचाएगा? ईश्वर राष्ट्र नायकों को सुबुद्धि दे। ❑

उन्होंने बंगाल को दिया था महामंत्र

□बलरामेन्द्रनाथ भार्गव

महात्मा गांधी की हत्या के बाद, हिन्दू महासभा ने आलोचना, दमन और आपदा का दौर झेला था। कई क्षेत्रों में यह धारणा व्यक्त की जाने लगी थी कि अब हिन्दू महासभा का पुनरोदय संभव नहीं है। लेकिन ऐसे अनेक ध्येय निष्ठ नेता और कार्यकर्ता भी थे, जो हिन्दू राष्ट्रवाद को राजनीति में प्रतिष्ठित करने के लिए पूर्णतः समर्पित थे। जब विशेष न्यायालय ने स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर को गांधी हत्या कांड षड्यंत्र में निर्दोष पाकर बरी कर दिया तो उन नेताओं और कार्यकर्ताओं में नयी आशा और विश्वास का संचार हुआ।

बंगाल प्रादेशिक हिन्दू महासभा ने १९४९ में कलकत्ता में हिन्दू महासभा अधिवेशन के आयोजन का दायित्व ग्रहण किया और जहां १९३९ में हुए हिन्दूमहासभा अधिवेशन में वीर सावरकर अध्यक्षता करने के लिए पधारे थे, उसी कलकत्ता में १९४९ में हिन्दू महासभा का अधिवेशन दूसरी बार आयोजित किया गया। अंडमान के धरती पर नरक कहे जाने वाले कारागार में स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के साथ कालापानी में यम यातनाएं भोगने वाले महान क्रान्तिकारी श्री आशुतोष लाहिड़ी, श्री देवेन्द्र नाथ मुखर्जी, श्री मनुज सर्वाधिकारी एवं सेठ भागीरथ मेहता और श्री राखाहरि चटर्जी आदि ध्येय निष्ठ नेताओं की साधना और निष्ठा का प्रतिफल उस प्रत्येक व्यक्ति ने कलकत्ता के उस हिन्दू महासभा अधिवेशन में निहारा। अधिवेशन के अध्यक्ष थे डॉ० नारायण भास्कर खरे और उद्घाटन करने के लिए पधारे थे स्वातन्त्र्य वीर सावरकर।

कलकत्ता के उस अधिवेशन में उत्तर प्रदेश से एक प्रतिनिधि के नाते मुझे भी भाग लेने का सौभाग्य मिला। उन वीर सावरकर की जो भव्य शोभा यात्रा उस अवसर पर निकाली गयी, उसमें जहां जनता का ठाठें मारता हुआ महासागर सड़कों पर दृष्टिगोचर हो रहा था, वहीं वह दृश्य भी मेरे लिए चिर स्मरणीय हो गया, जब मैंने देखा कि उस शोभायात्रा के अग्रभाग में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सैकड़ों गणवेशधारी कार्यकर्ता चल रहे थे। संघ के गणवेशधारी स्वयंसवकों का दिशा निर्देशन कर रहे थे माननीय एकनाथ जी रानाडे।

वह दृश्य तो स्मृतियों में सदैव के लिए एक प्रेरणा का क्षण बन गया है जब अधिवेशन के लिए बने सुविशाल पंडाल में अपार जनसमूह के उमड़ पड़ने के कारण उस पंडाल की सीमा निर्धारक कनाते हटानी पड़ीं। उस सुविशाल मैदान में तिल धरने को स्थान नहीं था। लाखों की संख्या में अधिवेशन स्थल पर उमड़े आबाल वृद्ध नर-नारियों को सम्बोधित करते हुए स्वातन्त्र्य वीर सावरकर ने अपने उद्घाटन भाषण में जहां स्वतंत्र भारत की राजनीति में हिन्दू महासभा और अखंड भारत की आवश्यकता पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला वहीं उनकी ओजस्वी वाणी से गूंजे उद्घोष के साथ ही मंच से गूंजा था "एक धक्का और दो-पाकिस्तान तोड़ दो।" यह नारा उनका वह उद्घोष एक प्रकार से अखंड भारत के उस स्वप्न दृष्टा के लिए अन्तह की पीड़ा पर व्यक्त प्रतिक्रिया थी, जिसने भारत की अखंडता और स्वतंत्रता के लिए ही दो जन्मों के कारावास की सजा पाने का अनोखा इतिहास लिखा था।

अब प्रतीत होता है कि भारत के भविष्य को दशकों पूर्व ही निहारने में समर्थ उस युग पुरुष को कलकत्ता के उस मैदान में आगत का आभास हो रहा था। १९७१ में कभी के पूर्वी पाकिस्तान और आज के बंगला देश ने जब पाकिस्तानी शासकों के विरुद्ध मुक्ति संग्राम का सफल संचालन कर उसकी नापाक गुलामी का तौक उतार फेंकने में सफलता पाई तो मुझे यह अनुभूति हुई कि १९४९ में वीर सावरकर द्वारा दिया गया एक धक्का और दो पाकिस्तान तोड़ दो का आह्वान सफलता के सोपान पा गया है।

वीर सावरकर का पाकिस्तान टूटने का स्वप्न घटनाक्रम ने पूर्ण कर दिखाया। सोचता हूं कि यदि वीर सावरकर ने वह अवसर अपने नेत्रों से निहारा होता तो उन्हें एक असीम आनन्द की अनुभूति तो होती ही साथ ही वे सराहते इस देश की उस महिमामयी प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी को भी, जिन्होंने बंगला देश के मुक्ति योद्धाओं को अपना नैतिक समर्थन विशुद्ध मानवीय दृष्टिकोण से दिया था। साथ ही मन में आता है यह विचार भी कि यदि वीर सावरकर १९७१ में भी सशरीर हमारे मध्य विराजमान होते तो वे तत्कालीन शासकों को कुछ ऐसी दिशा भी प्रदान करते कि जो बंगला देश में भारत के प्रति आदर भाव को स्थायित्व प्रदान करती।

८/२६६, आर्य नगर, कानपुर

अकेले भी रहो तो हिन्दू ध्वज को थामे रखना

❑ चमन लाल क्षत्रिय

उपरोक्त युग संदेश मैंने वीर सावरकर की ओजस्वी वाणी से १९५६ में भारत की राजधानी दिल्ली में, हिन्दी महासभाई कार्यकर्ताओं के एक सम्मेलन में दिया था। वीर सावरकर जी उस वर्ष १८५७ के स्वाधीनता संग्राम की शताब्दी के सिलसिले में आयोजित हुए समारोह में भाग लेने के लिए दिल्ली पधारे थे। हिन्दू महासभाई कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए उन्होंने जो विचार व्यक्त किए थे, उनका सार यही था कि हिन्दू राष्ट्रवाद को आधार बनाकर राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय रहना कांटों की डगर है इस पर चलना घर फूंक तमाशा देखने का ही पर्याय है। यह पथ ऐसा है, जिस पर चलने वालों को अपनो से उपेक्षा ही नहीं अपितु आलोचनाओं की बौछार भी झेलनी पड़ती है।

अपने विचारों को विस्तार सहित व्यक्त करते हुए उन्होंने कुछ इस तरह के भाव भी व्यक्त किए थे कि उनके नेतृत्व को स्वीकार करने वालों में से अनेक को फांसी की रेशमी डोर चूमकर अपना जीवन समर्पित करना पड़ा तो अनेक ने यमयातनाएं झेली हैं। इस इतिहास को जानकर भी जो मुझ पर आस्था रखते हैं, उन्हें ऐसी अनेक स्थितियां झेलनी पड़ती हैं, जिनसे अनेक बार उनके मन में निराशा की भाव भी उपजता है अतएव जिसे सुख-सुविधा और वैभव पूर्ण जीवन की चाह है, उसके लिए यह राह अति दुर्गम है।अतएव जो इन सारी विपरीत परिस्थितियों को झेलने में समर्थ है उसे यह संकल्प ग्रहण करना होगा कि वह यदि अकेला भी रहे तो हिन्दू ध्वज को पूर्ण आत्म विश्वास के साथ अपने हाथ में थामे रहे।

उनके उद्‌बोधन को सुनकर मुझे यह अनुभूति हुई थी कि वीर सावरकर एक अद्‌भुत नेता हैं, जो सार्वजनिक जीवन में हिन्दू राष्ट्रवाद का मार्ग अपनाने वाले कार्यकर्ता को सुख, सुविधा और सत्ता के सपने नहीं दिखाते अपितु उसके मन में यह विश्वास जगाते हैं किहिन्दू राष्ट्रवाद की राह एक अग्निपथ है। यद्यपि उसी के अनुगमन में वे भारत की समस्याओं का समाधान मानते थे। उन्होंने जो विचार उस अवसर पर व्यक्त किए उसमें यह भाव भी प्रधान था कि अन्ततोगत्वा वह दिन अवश्य ही आएगा जब यह महान राष्ट्र हिन्दुत्व के महामंत्र से अभिमंत्रित होकर वह सशक्ति और बलशाली रूप ग्रहण करेगा कि जिससे भारत को एक अजेय राष्ट्र की स्थिति प्राप्त होगी और वही विश्व को मानवता की राह अपनाने और भेदभाव को भुलाने हेतु मार्ग दर्शन देगा। ❑ लोनी (गाजियाबाद)

यदि हमने ध्यान दिया होता तो ....

❑ बटेश्वर दयाल शर्मा

१८५७ के स्वाधीनता की शताब्दी के अवसर पर राजधानी में आयोजित हुए भव्य समारोह में स्वातंत्र वीर विनायक दामोदर सावरकर का आगमन उन सभी के लिए एक प्रेरणा का अवसर था, जिन्होंने उस युग दृष्टा के संदेश को सुना। राजधानी की विशाल सभा में उनका भाषण, इस अवसर पर निकाली सुविशाल शोभायात्रा का दृश्य आज भी वीर सावरकर का नाम सुनते ही मानस पटल पर उभर आता है। सभा में श्रोताओं की अपार भीड़ थी तो शोभायात्रा भी अनूठी थी। जिस वाहन पर वीर सावरकर सवार थे, उसमें उनके साथ वह अनेकव्यक्तित्व भी थे, जिन्होंने देश की राजनीति पर अपनी खास छाप छोड़ी थी। उनमें हिन्दू राष्ट्रवाद के प्रखर प्रवक्ता महंत दिग्विजय नाथ और प्रोफेसर विष्णु घनश्याम देशपांडे शामिल थे तो राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और आर्य जगत के अनेक तेजस्वी नेता भी शामिल थे।

इसी अवसर पर आर्य समाज के नेताओं की ओर से वीर सावरकर के सम्मान में एक आयोजन हुआ था। उसमें सावरकर जी ने आह्वान किया था कि आने वाले दस वर्षों तक आर्य समाज को अन्य सभी कार्यक्रमों को स्थगित कर शुद्धि को ही अपना एकमात्र प्रभावी कार्यक्रम बना लेना चाहिए। उनका यह सुझाव था कि आर्य समाज इस कार्यक्रम

को कम से कम एक दशक तक तो प्रभावी ढंग से चलाए ही। उसका शुद्धि अभियान राष्ट्र को उस पथ पर आगे बढ़ाएगा, जिस पर चलकर उसे एक सशक्त रूप प्राप्त हो जाएगा।

वीर सावरकर का यह स्पष्ट चिंतन था कि धर्मान्तरण का अर्थ भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रान्तरण भी होता है। अपनी इस मान्यता के पक्ष में उनके अनेक इतिहास सिद्ध तर्क थे।

आज राष्ट्र में विभिन्न मत, मजहब, पंथ और जातियों के नाम पर अलगाव के उभार की जो विषैली हवा बह रही है, उससे यही गूंज सी सुनाई पड़ती है कि काश हम लोगों ने उस युग पुरुष की चेतावनी पर ध्यान देकर शुद्धि अभियान को गतिमान किया होता। शुद्धि अभियान वीर सावरकर के विचार में राष्ट्र को बलवान और एकजुट करने का एक सशक्त माध्यम था। यदि हमने अपनी पूरी शक्ति शुद्धि आन्दोलन को जन अभियान बनाने में लगाई होती और तो आर्य समाज में भी एक नई चेतना आती और साथ ही साथ इस राष्ट्र में उन तथाकथित नेताओं को अपने उन क्रियाकलापों को खुलकर फैलाने का मौका न मिल पाता जो हिन्दू समाज में विघटन को ही अपना ईमान बना बैठे हैं। आज भारत में ही हिन्दू जनसंख्या का आनुपातिक लिहाज से अन्य मतावलम्बियों की तुलना में हो रहा ह्रास इस देश के भविष्य पर मंडराने वाले खतरों का संकेत दे रहा है। नेता वही है, जो सुदूर भविष्य को बहुत पहले ही निहार लेता है। इस कसौटी पर वीर सावरकर का व्यक्तित्व ही खरा उतरा हैं वह तो हमारे मध्य नहीं हैं, किन्तु उनका शुद्धि आन्दोलन को गतिमान करने का संदेश आज भी उतना ही युग उद्बोधक है। आओ उनके जन्म दिवस पर हम उनके उस आह्वान को गतिमान करने का संकल्प ग्रहण करें।

प्रधान आर्य समाज दीवानहाल, दिल्ली

दयानन्द संस्थान द्वारा संचालित महात्मा वेदभिक्षु : ग्रन्थमाला सस्ता साहित्य प्रचार योजना

हमें चाहिए ऐसे एक हजार सहयोगी जो एक बार एक हजार रुपया प्रदान करें हमारी इच्छा है कि गीता प्रेस गोरखपुर के समान सस्ते सुलभ मूल्य पर वैदिक ग्रन्थ और धर्मरक्षक साहित्य देश के हर ग्राम, नगर और घर-घर तक पहुँचे। आपके द्वारा प्रदान की गई राशि सें हम अपनी इस योजना को सफलता के द्वार तक पहुँचा सकेंगे। इस प्रकाशन योजना के अन्तर्गत प्रकाशित हो सकेंगे ऐसी अनेक दुर्लभ पुस्तकें जो अब अप्राप्य है।

इस योजना का शुभारम्भ हम "जनज्ञान" के पाँच सहयोगियों द्वारा प्रदत्त राशि से कर रहे हैं। आर्य जनता, हिन्दुत्वनिष्ठ श्रेष्ठिजन, सामाजिक कार्यकर्ता बन्धु और देव दयानन्द तथा अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द एवं स्वातन्त्र्य वीर सावरकर व देवता स्वरूप भाई परमानन्द के दर्शन और विचारों का प्रचार और प्रसार ही इस योजना की प्रेरणा है।

अमर हुतात्मा पं० लेखराम की शताब्दी के इस वर्ष में "जनज्ञान" उनके दिशा-निर्देश को व्यवहार में लेकर यह योजना प्रारम्भ कर रहा है।

आपका सहयोग मंहगाई के महारोग से रक्षा करने में योगदान देगा और आपको आज की मंहगाई के इस युग में भी सुलभ मूल्य पर सत् साहित्य प्राप्त हो सकेगा।

हमारा आपसे इस पावन उद्देश्य की पूर्ति हेतु योगदान का आह्वान है। विश्वास है आप ध्यान देंगे। स्वयं सहयोग करेंगे और अन्य समर्थ सहयोगियों को प्रेरित करेगें।

आपके एक हजार : करेंगे दुर्लभ साहित्य का उद्धार

राकेश रानी, अध्यक्ष

सहयोग राशि निम्न पते पर भिजवाइए

वेदभिक्षुः ग्रन्थमाला सस्ता साहित्य प्रचार योजना

दयानन्द संस्थान, २२८६ आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-११०००५ दूरभाष : ५७२४७४१

भुला दिया गया वह प्रथम राष्ट्र-गीत

❑ वचनेश त्रिपाठी 'साहित्येन्दु'

महान क्रांतिवीर विनायक दामोदर सावरकर ने सन् १९०७ में लंदन में रहते हुए एक ग्रंथ लिखा था '१८५७ का भारतीय स्वातन्त्र्य समर'। इस ग्रंथ में सावरकर ने एक ऐसे क्रांति गीत का हवाला दिया है जो १८५७ की क्रांति के बाद लुप्त हो गया। वीर सावरकर ने इस संदर्भ में 'ट्रैवोलियन' के ये शब्द उद्धृत किए हैं अपने ग्रंथ में कि 'दिल्ली के बादशाह बहादुर शाह जफर के राज दरबार के एक प्रमुख कवि ने एक राष्ट्रगीत की रचना की थी जिससे कि उस क्रांतिकाल (१८५७) में वह समग्र हिन्दुस्थान के कंठ से निनादित हो सके। इस गीत में तत्कालीन हीन दासता का वर्णन ऐसे शब्दों में किया था कि जिसे सुनकर ही हृदय द्रवित हो उठता है। इस गीत में बताया गया है कि कभी भारत के एक कोने से दूसरे कोने पर्यन्त विजय स्तुति गायी जाती थी। उसी के मस्तक पर आज दासता का चिह्न अंकित है। उस विपर्यस्त और लज्जास्पद स्थिति पर राष्ट्र गीत द्वारा भारत भूमि के आक्रोश का विवरण प्रस्तुत कर इसमें कामना व्यक्त की गई थी कि भारत की जनता अपनी प्रचंड संगठन शक्ति से दासता के बन्धन तोड़ कर स्वाधीनता प्राप्त कराए। अंत में वीर सावरकर ने खोजी इतिहासकारों का आह्वान किया लिखा कि इस लुप्त राष्ट्र गीत का कोई मसविदा यदि कोई शोधकर्ता लेखक प्रस्तुत करेगा तो देश के इतिहास पर वह अक्षय उपकार करेगा।

कोई अर्द्ध शताब्दी बाद इस बात का पता चला कि जिस "राष्ट्र गीत" की खोज की बात वीर सावरकर ने अपने ग्रंथ में सन् १९०७ में विदेश (विलायत) पढ़ते वक्त लिखी थी, वह गीत जैसा कि सावरकर का विचार था कि उसे बादशाह बहादुर शाह जफर के राजदरबार के एक प्रमुख कवि ने लिखा— ऐसा नहीं है वरन उस गीत के रचयिता थे, सत्तावनी क्रांति के ही महान नेता नाना साहब पेशवा के सचिव और सहयोगी अजीमुल्ला खां। और इस बात का समर्थन 'भुसावल बम कांड' के क्रांतिकारी डॉ० भगवान दास माहौर तथा 'काकोरी केस' के प्रसिद्ध क्रांतिकारी एवं साहित्यकार भाई मन्मथनाथ गुप्त ने भी किया है कि वस्तुतः इस सत्तावनी क्रांति गीत के प्रणेता क्रांतिकारी अजीमुल्ला खां ही रहे थे और ये वही थे, जिन्हें अपने एक अन्य व्यक्ति रंगो बापू जी के साथ नाना साहब पेशवा ने शुरू में इंग्लैंड भेजा था। अजीमुल्ला खां, नाना साहब पेशवा के परम विश्वस्त सचिव तथा एक सच्चे देशभक्त क्रांतिकारी थे, जो सत्तावन की क्रांति में प्राणों की बाजी लगाकर सक्रिय रहे। अजीमुल्ला खां का लिखा वह क्रांतिकिंवा झंडा गीत जिसे वीर सावरकर ने अपने ग्रंथ में प्रथम राष्ट्र गीत करार दिया है, इस प्रकार है :

हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा।
पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी प्यारा॥
ये है हमारी मिल्कियत, हिन्दुस्तान हमारा।
इसकी रूहानियत से रोशन है जग सारा॥
कितना कदीम, कितना नईम, सब दुनिया से न्यारा।
करती है जरखेज जिसे गंगो जमुन की धारा।
ऊपर बर्फीला पर्वत पहरेदार हमारा।
नीचे साहिल पर बजता सागर का नक्कारा।
इसकी खानें उगल रही हैं, सोना-हीरा-पारा।
इसकी शानो शौकत का दुनिया में जयकारा॥
आया फिरंगी दूर से, ऐसा मंतर मारा।
लूटा दोनों हाथ से प्यारा वतन हमारा॥
आज शहीदों ने है तुमको अहले वतन ललकारा।
तोड़ो गुलामी की जंजीरें बरसाओ अंगारा॥
हिन्दू-मुसलमां सिख हमारा भाई-भाई प्यारा।
यह है आजादी का झंडा, इसे सलाम हमारा।

अजीमुल्ला प्रणीत यह झंडा गीत १८५७ की क्रांति के समय जिस दिल्ली के अखबार 'पैगामे-आजादी' में छपा था, उस अखबार को भी अंग्रेजों ने न सिर्फ जब्त कर रखा था वरन उसकी सब प्रतियां ढूंढ़-ढूंढ़ कर जला दी थीं।

(शेष पृष्ठ ३४ पर)

साहस और कुर्बानी की मिसाल–खुदीराम बोस

❑ डॉ० के० एल० जौहर

स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में खुदी राम बोस का नाम हमेशा आदर तथा सम्मान के साथ लिया जाएगा। वह बंगाल प्रान्त के एक मंझे हुए क्रान्तिकारी थे, जिन्हें ११ अगस्त १९०८ को बिहार प्रांत की मुजफ्फरपुर जेल में फांसी पर झुला दिया गया।

इन दिनों कलकत्ता में 'किंग्सफोर्ड' चीफ प्रेसीडेंसी मैजिस्ट्रेट था। वह अत्यन्त दुष्ट तथा जालिम अफसर था तथा बंगाली देशभक्तों को विशेषकर क्रांतिकारियों को बहुत तंग करता था और उन पर नाना प्रकार के अत्याचार करता था। उन्हें शारीरिक तथा मानसिक यातनाएं देता था। हर स्वाभिमानी बंगाली की आंखों में वह खटकता था। क्रांतिकारियों ने उसे मार डालने की ठान रखी थी।एक बार पुस्तक के अन्दर के पन्नों को काट कर बम फिट किया गया था और यह पुस्तक अच्छी तरह से पैक करके किंग्सफोर्ड के पास पहुंचाई गई थी। इसका रहस्य यह था कि रस्सी के खोलते ही कमानी के सहारे आवरण पृष्ठ उछलता और बम का विस्फोट हो जाता परन्तु किंग्सफोर्ड की किस्मत अच्छी थी । उसने यह कह कर कि वह इस पुस्तक को बाद में देखेगा, इसे आलमारी में रखवा दिया।

इस अफसर के खिलाफ रोष बढ़ता चला गया और उसका तबादला बंगाल से मुजफ्फरपुर हो गया परन्तु क्रान्तिकारियों ने तो उसे समाप्त करने का निर्णय ले लिया था।वीरेन्द्र कुमार घोष जो युगांतर क्रांतिकारी दल के नेता थे, ने यह घोषणा की कि किंग्सफोर्ड को मुजफ्फरपुर में ही मारा जाएगा।इस काम के लिए खुदीराम बोस तथा प्रफुल्ल चाकी को चुना गया। ये दोनों क्रान्तिकारी बहुत सूझबूझ वाले थे।इनकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं था कि देशभक्तों को तंग करने वाले को मार डालने का काम इन्हें सौंपा गया है।वे दोनों मुजफ्फरपुर पहुंच गए।एक धर्मशाला में आठ दिन रहे और किंग्सफोर्ड की दिनचर्या तथा गतिविधियों पर पूरी तरह से नजर रखने लगे।उसके बंगले के पास ही क्लब था जहां अंग्रेजी अफसर और उनके परिवार अक्सर सायंकाल में जाया करते थे। किंग्सफोर्ड और उसकी पत्नी शाम को क्लब में पहुंचे। मिसेज कैनेडी और उसकी बेटी भी वहीं थे और वे सब ताश खेल रहे थे। ३० अप्रैल, १९०८ का दिन था। रात्रि के साढ़े आठ बजे मिसेज कैनेडी और उसकी बेटी अपनी बग्घी में बैठ कर क्लब से घर की ओर चलीं। उनकी बग्घी का रंग भी लाल था और यह बिल्कुल किंग्सफोर्ड की बग्घी से मिलती जुलती थी। खुदी राम बोस तथा उनके साथी ने इस बग्घी को किंग्सफोर्ड की बग्घी समझा और उस पर बम फैंक दिया। देखते ही देखते बग्घी की धपच्चियां उड़ गई और उसमें सवार मां-बेटी दोनों का ही देहांत हो गया। क्रान्तिकारी इस विश्वास को लेकर भाग निकले कि वे किंग्सफोर्ड को मारने में सफल हो गए हैं।

२५ मील भागने के बाद खुदीराम बोस एक रेलवे स्टेशन पर पहुंचे। सख्त भूख लगी थी। एक दुकान से कुछ खाने का सामान लिया। वहीं दो पुलिस के सिपाही खड़े थे और आपस में बात कर रहे थे कि मुजफ्फरपुर में बम द्वारा मिसेज कैनेडी और उसकी पुत्री को मार डाला गया। खुदी राम बोस को सख्त सदमा पहुंचा और एकदम बोल उठा "इसका मतलब यह हुआ कि किंग्सफोर्ड बच निकला।" पुलिस के लोग चौकन्ने हो गए। उन्हें खुदी राम बोस पर इस बम कांड का संदेह हो गया। वे इनके पीछे-पीछे रेलवे स्टेशन पर गए और इनको गिरफ्तार कर लिया गया। इनके पास से दो पिस्तौल निकले। उनके मन में तनिक भी भय या विषाद की भावना नहीं थी। खुदी राम बोस को जेल में डाल दिया गया और उन पर हत्या का मुकदमा चला। अपने बयान में उन्होंने निडरता से स्वीकार किया उन्होंने तो किंग्सफोर्ड को मारने का प्रयास किया था परन्तु उसे इस बात पर बहुत अफसोस है कि निर्दोष कैनेडी तथा उसकी बेटी गलती से मारे गए। मुकदमा केवल पांच दिन चला। ८ जून १९०८ को उन्हें अदालत में पेश किया गया और १३ जून को उन्हें प्राण दंड की सजा सुनाई गई। इतना संगीन मुकदमा और केवल पांच दिन में समाप्त। यह बात न्याय के इतिहास में एक मजाक बना रहेगा।

खुदीराम बोस को लाख समझाया गया कि वह

हाईकोर्ट में अपील कर दें परन्तु उन्होंने एकदम इन्कार कर दिया। ११ अगस्त १९०८ को सुबह ६ बजे वह हंसते-हंसते फांसी के फंदे पर झूल गए। उन्होंने वंदेमातरम' का नारा बुलन्द किया। उस तेजस्वी क्रान्तिकारी के चेहरे पर एक अनोखी मुस्कान थी। खुदी राम बोस का जन्म जिला मिदनापुर में पश्चिमी बंगाल के एक गांव हबीबपुर में ३ दिसम्बर, १८८९ को हुआ। ६ वर्ष की अल्पायु में उनकी मां चल बसी और उनके एक साल बाद उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। उनकी बड़ी बहन ने उनका पालन-पोषण किया तथा पढ़ाया।

वह स्कूल के दिनों से ही राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने लगे थे। छोटे-छोटे हिन्दुस्तानी स्कूली बच्चे भी अंग्रेजों से नफरत करते थे, जलसे-जलूसों में शामिल होते थे तथा अंग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ नारे लगाते थे। १९०५ में जब बंगाल का विभाजन हुआ तो घृणा की यह भावना और भी तीव्र हो गई। खुदीराम बोस ने ९वीं कक्षा में स्कूल छोड़ दिया और वह क्रांतिकारी दल के सक्रिय सदस्य हो गए। वह सत्येन बोस से मिले और उन्हीं के हैंडलूम के कारखाने में रहने लगे। यहां कई अन्य नौजवान क्रांतिकारियों से मुलाकात हुई। यहां उन्होंने शारीरिक, नैतिक तथा राजनीतिक शिक्षा ली। गीता का भी अध्ययन किया। उन्हें अपने कर्म तथा कर्त्तव्य पूर्ति का अहसास हुआ। उन्होंने अपने देश की आजादी के लिए आजीवन काम करने की शपथ ली। मजीनी तथा गारीबाल्दी की जीवनियों को भी पढ़ा। फ्रांस के शानदार इतिहास को भी देखा। अमरीका के लोगों ने आजादी की लड़ाई में जिस बहादुरी का प्रमाण दिया वह भी उनके दिल तथा दिमाग में बैठ गई। उन्होंने पिस्तौल चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त किया। अब वह किसी भी क्रान्तिकारी काम के लिए तैयार थे। उन्होंने अंग्रेजी वस्तुओं के बहिष्कार के आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। विदेशी वस्तुओं विशेषकर कपड़ों की कई बार होली जलाई। कई बार भारतवर्ष में नमक ला रही अंग्रेजी नौकाएं डुबोई। छात्र भंडार खोला जहां अपने देश में बनाई हुई वस्तुओं की बिक्री सस्ते दामों पर करने लगे। स्वदेशी आंदोलन को प्रोत्साहन देने के लिए यह एक सराहनीय प्रयास था।

२८ फरवरी, १९०६ के दिन 'सोनार बंगला' नामक एक इश्तिहार बांटते हुए पुलिस ने उन्हें दबोच लिया परन्तु वह हृष्ट-पुष्ट थे इसलिए पुलिस के सिपाही की पिटाई करके भाग निकले। १६ मई १९०६ को दोबारा उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया परन्तु उनकी छोटी आयु को देखते हुए चेतावनी देकर छोड़ दिया गया। लेकिन वह अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों से कहां टलने वाले थे। ६ दिसम्बर, १९०७ को बंगाल के नारायणगढ़ रेलवे स्टेशन पर जो बम फैंका गया था, वह उसमें भी शामिल थे और उसके बाद १९०८ में मुजफ्फरपुर में किंग्सफोर्ड को मार डालने का असफल प्रयास।

फांसी के समय बोस केवल १९ वर्ष के थे। उन्होंने अपना जीवन देश की आजादी के लिए न्यौछावर कर दिया। आज भी खुदीराम बोस जैसे वीर सेनानी अपने देशवासियों को निष्ठा, लगन तथा मेहनत से काम करने की प्रेरणा देते हैं। आइए हम खुदीराम बोस के साहस तथा कुर्बानी की शिक्षा लें तथा देश में बढ़ती सामाजिक कुरीतियों का डट कर मुकाबला करें। ❑

(पृष्ठ ३२ का शेष)

जिसके पास 'पैगामे-आजादी' की कोई प्रति बरामद हो जाती थी, उसे अंग्रेज फांसी दे देते थे या गोली मारकर खत्म कर देते थे। यही नहीं, अंग्रेज फांसी देने के पहले हिन्दू कैदी के मुंह में गोमांस ठूंस देते थे और अगर मुसलमान के पास 'पैगामें आजादी' अखबार बरामद हुआ तो उसके मुंह में सुअर का मांस जबरन डालते थे। ऐसा कोप रहा था इस क्रांतिकारी अखबार पर। उस अखबार का परिचय पत्रकारिता के इतिहास से कितना कहां जुड़ा? कितने हजार लोग अजीमुल्ला के लिखे उक्त झंडा गीत को गाते शहीद हुए, इसे कौन बता सकता है? अगर आज वीर सावरकर होते तो इस गीत का इतिहास और उसके प्रणेता अजीमुल्ला का नाम जानकर भाव-विभोर हो जाते। क्योंकि वे भारतीय क्रांति के लिए दोहरे काले पानी की (५० वर्ष) सजा काटकर अंडमान को आबाद कर सके थे। प्रश्न है कि भारतीय नई पीढ़ी को वह इतिहास अंग्रेजों ने पढ़ने ही कब दिया, जैसा कि अकबर इलाहाबादी ने कहा कि

तोप खिसकी, तो प्रोफेसर पहुंचे'

अर्थात् अंग्रेजों की दमनकारी तोपें हटीं तो भारतीयों को अंग्रेजीयत और अंग्रेज परस्ती का पाठ पढ़ाने विलायती प्रोफेसर यहां पहुंच गए ताकि देश का सही इतिहास यहां के स्कूल-कालेजों में न पढ़ाया जा सके।' और आजाद भारत में भी शासकों की दुर्नीति व वही कुछ रवैया जारी रहा है।

चातुर्वर्ण व्यवस्था कितनी वैदिक?

❑ बी० प्रकाश

सवर्ण कौन?

वेद मंत्रों की दृष्टि से समाज के लिए उपयोगी कार्य चुनने या वरण करने वाला प्रत्येक व्यक्ति सवर्ण है। अवर्ण तो केवल वह हुआ जो सर्वथा निठल्ला है और किसी भी उपयोगी कार्य का वरण नहीं कर रहा है। जो हानिकारक कार्यों को चुनता है वह तो वेदों की दृष्टि में नितान्त अवांछनीय है और दंडनीय है। परन्तु जो भी व्यक्ति समाज के लिए हितकारी कार्य व गुण का वरण करके अपनी रोजी रोटी कमाता है वह निश्चय ही सवर्ण है। यह इस देश का दुर्भाग्य है कि सवर्णों में केवल ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों की ही गणना होती है और वह भी गुण, कर्म के आधार पर न करके जन्म के आधार पर की जाती है। शूद्रों को हेय और नीच समझा जाता है तथा एक तरह से अवर्ण माना जाता है जबकि श्रमसिद्ध शूद्र वर्ग वेद मंत्रों के अनुसार एक निश्चित वांछनीय और आदरणीय वर्ण है। मिथ्या वर्ण अभिमान करने वाले, द्वेषभाव रखने वाले, छली कपटी और निन्दक व्यक्ति तो वेद मंत्रों के अनुसार सवर्ण माने ही नहीं जाने चाहिए क्योंकि उनकी गणना तो अवांछनीय तत्त्वों में की गई है। काश कि ऐसा हो पाए कि समाज के लिये उपयोगी कार्य करने वाले सारे व्यक्ति वैदिक मंत्रों के अनुसार एक-दूसरे को अपने जैसा आदरणीय सवर्ण व्यक्ति ही समझें और परस्पर प्रीति से व्यवहार करें। (रुचं नो धेहि..... यजु० १८/४८)

शूद्र का अनादर अपराध है

त्रुटिपूर्ण चिंतन और व्यवहार के कारण शूद्र शब्द के प्रयोग के जो गलत संस्कार पड़ गए हैं उनको अविलम्ब त्याग देना चाहिए। मिथ्या चिंतन ने इस शब्द के वास्तविक अर्थों को ही भ्रष्ट कर दिया है और जनसमुदायों के बीच वैचारिक खाई उत्पन्न कर दी है। मनों में कडुवाहट भर गई है। इस कडुवाहट और भेदभाव को तुरन्त त्याग देना एक सामाजिक कर्त्तव्य है। यजुर्वेद के मंत्र ३०/५ में स्पष्ट कहा है कि तप के लिए अर्थात् कठोर श्रम के लिए शूद्र हमें प्राप्त हों। शूद्रों की प्राप्ति की कामना उतनी ही पवित्र है जितनी ज्ञान प्रसार के लिए ब्राह्मणों की, राज्य रक्षा के लिए राजपुरुषों की और प्रजा पोषण के लिए वैश्यों की। बिना कठोर श्रम के समाज दो कदम चल नहीं सकता। अतः श्रम सम्पन्न व्यक्ति समाज के लिए उतने ही आवश्यक हैं जितने अन्य कोई भी उपयोगी कार्य करने वाले आवश्यक हैं। जो व्यक्ति शूद्र का तात्पर्य किसीभी प्रकार से हेय व्यक्तियों से लेते हैं, उन्हें म्लेच्छ दुराचारी व निम्न कोटि का समझते हैं। वे वास्तव में एक अपराध करते हैं। उन्हें तुरन्त अपने चिंतन का परिष्कार करना चाहिए। यदि शूद्र से म्लेच्छ या दुराचारी व्यक्ति का तात्पर्य होता तो वेद मंत्रों में शूद्र को वांछनीय क्यों घोषित किया जाता? इस संदर्भ में यजुर्वेद का मंत्र ३०/२२ **अथ तानष्टौ विरूपना .... प्राजापत्याः** उल्लेखनीय है। इस मंत्र के उत्तरार्द्ध में कहा गया है कि जो शूद्र व ब्राह्मण से भिन्न हों अशूद्र व अब्राह्मण और ईश्वर से निकट हों वे समाज को प्राप्त हों। परन्तु ऐसे व्यक्ति यदि निन्दनीय, जुआरी, नपुंसक हों तो उन्हें दूर रखना चाहिए। इसका आशय तो यह प्रतीत होता है कि ब्राह्मण और शूद्र अर्थात् ब्रह्म ज्ञान के धनी और कठोर श्रम के धनी तो समाज के लिए आवश्यक हैं ही (जैसा कि मंत्र सं० ५ में कहा भी गया है) जो व्यक्ति ऐसे नहीं हैं परन्तु ईश्वर के निकट हैं वे भी वांछनीय हैं। जो अब्राह्मण और अशूद्र हैं परन्तु निन्दनीय, जुआरी व अशक्त हैं उससे दूरी रखनी है। इससे स्पष्ट होता है कि वेद मंत्र इस बात का आश्वासन देना चाहता है कि जो सच्चे अर्थों में ब्राह्मण या शूद्र हैं अर्थात् ज्ञान और श्रम के धनी हैं वे तो निन्दनीय, कुव्यसनी या व्यभिचारी हो ही नहीं सकते। मंत्र ने तो ब्राह्मण और शूद्र को अर्थात् ज्ञान और श्रम सम्पन्न व्यक्तियों को एक तरह से समान आदर दिया है और यह भी कहा है कि यदि कोई व्यक्ति ब्राह्मण या शूद्र नहीं है परन्तु ईश्वर के निकट है तो वह भी वांछनीय है। यही नहीं मंत्र ने समाजोपयोगी ब्राह्मणों तथा शूद्रों को प्राथमिक वरीयता देकर आधारभूत माना है। जहां तक श्रम का प्रश्न है क्षत्रिय और वैश्य से भी कठोर श्रम की ही अपेक्षा की जाती है। यद्यपि दोनों को पहले ही समाज के लिए वांछनीय घोषित किया जा चुका है, इस मंत्र में अब्राह्मण और अशूद्र शब्दों के साथ-साथ अक्षत्रिय और अवैश्य शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। क्या आश्चर्य

है कि व्यापक मान्यता देने के लिए मंत्र यह संकेत देना चाहता है कि क्षत्रिय, वैश्य तथा अन्य भी कठोर श्रम करने वाले होते हुए शूद्र ही हैं। शूद्र शब्द का व्यावहारिक संस्कार इतना बिगाड़ दिया गया है कि यह बात सबके गले नहीं उतरेगी अन्यथा श्रमनिष्ठ कर्मयोगियों में अपनी गणना कराने में प्रत्येक व्यक्ति को गर्व होना चाहिए। किसी भी अवस्था में वेद शूद्र का अनादर करने की आज्ञा नहीं देते। अनादर के पात्र तो वे व्यक्ति हैं जो अहितकर गुण कर्म के कारण मंत्रों में अवांछनीय घोषित किये गए हैं। यदि किसी ने भी शूद्र का अपमान या अनादर करने की बात कही है या अब कोई करता है तो ऐसा करना सर्वथा वेद विरुद्ध है।

एक विवादस्पद मन्त्र?

अब एक ऐसे महत्त्वपूर्ण मंत्र पर विचार करना आवश्यक है जो विवादास्पद माना जाता है। यह मंत्र यजुर्वेद के अध्याय ३२ का मंत्र सं० ११ है, अथर्व वेद के कांड १९ के सूक्त ५ का मंत्र सं० ६ है और ऋग्वेद के मंडल १० के सूक्त ९० का बारहवां मंत्र है **ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत ..... पद्भ्यां शूद्रो अजायत:**

अर्थ इस प्रकार दिया गया है कि ब्राह्मण इस पुरुष का मुख, क्षत्रिय इसकी भुजाएं, वैश्य इसका मध्य भाग हुआ और शूद्र इसके पैरों से उत्पन्न हुआ।

ऋग्वेद के इस मंत्र का संदर्भ यह है कि सूक्त ९० में जो षोडशर्च सूक्त कहलाता है परमात्मा के प्रताप और सामर्थ्य की एक रूप के माध्यम से व्याख्या की गई है। उक्त मंत्र से पूर्व मंत्र ११ में कहा गया है कि परमात्मा की पुरुष रूप में कल्पना की गई है तो इस पुरुष का मुख भाग क्या कहा गया, दोनों बाहू क्या कहलाए, जंघाएं क्या कहलाई और दोनों पैर क्या कहे गए। उक्त विवादास्पद मंत्र सं० १२ इसी का उत्तर देता है। सूक्त के अन्य मंत्रों में रूपक को और विस्तृत करते हुए कहा गया है कि उसकी मनन करने की क्षमता से चन्द्रमा, रूप दर्शन सामर्थ्य से सूर्य, मुख से विद्युत व अग्नि और प्राण से वायु हुए (मं. १३), नाभि से अंतरिक्ष की कल्पना की, सिर भाग से विशाल आकाश की, पैरों से भूमि और कानों से दिशाएं (मंत्र १४) इत्यादि। ऐसा ही वर्णन संदर्भ यजुर्वेद और अथर्ववेद के मंत्रों में अपनाया गया है। इस प्रकार से एक रूप के माध्यम से तीनों वेदों में मानव समाज तथा प्रकृति के अंगों की महत्त्व की दृष्टि से व्याख्या की गई है।

विवाद इसलिए होता है कि शूद्र को पैर से उत्पन्न क्यों कहा गया। पैर तो निम्नतम अंग होता है। यजुर्वेद और अथर्ववेद के भाष्यकारों ने तो मूर्खपन का अवगुण भी शूद्र के साथ जोड़ा है यह विचार नितान्त असंगत है। शूद्र को हेय समझकर इस शब्द का संस्कार बिगाड़ा गया है, यही विवाद की जड़ है। वेद की दृष्टि में शूद्र श्रमनिष्ठ प्रीतिपूर्वक सेवा करने वाला ऐसा व्यक्ति है जो केवल शरीर से समाज की सेवा कर सकता है। वह श्रमनिष्ठ है इसलिए नितान्त वांछनीय है। यदि मूर्ख या नीच होता तो वांछनीय क्यों माना जाता? जन्मगत जाति के आधार पर जिनका वर्गीकरण जबरदस्ती शूद्र की श्रेणी में कर दिया गया है उनमें से असंख्य व्यक्ति अपनी दक्षता के आधार पर अनेक उपयोगी कार्य करते हैं और इस कारण से वे शारीरिक श्रमसेवियों के वर्ण से बाहर आ चुके हैं। उनके गुण कर्मानुसार वर्ण बदल चुके हैं। परन्तु इस बारे में दोहरी गलती हो रही है। तथाकथित उच्च वर्ण वाले तो उन्हें जन्मगत जाति के आधार पर शूद्र समझते ही हैं, वे स्वयं भी गुण कर्मानुसार वर्ण बदल जाने पर भी अपने को शूद्र वर्ण में मानते रहते हैं जिससे चिढ़न उत्पन्न होती है। वेद मंत्रों की दृष्टि में दोनों गलत हैं। मंत्र के रूपक में शूद्र का आशय केवल उन व्यक्तियों से है जो केवल शारीरिक श्रम का तप करते हैं—न कृषक हैं, न नाविक, न कुम्हार हैं, न दस्तकार इत्यादि क्योंकि ये सब तो पृथक वर्ण हैं। फिर भी वेद ने ऐसे शारीरिक श्रमनिष्ठ व्यक्तियों को समाज का आधार घोषित किया है। जिस प्रकार मानव शरीर पैरों के बल पर खड़ा होकर ही अपने जागरूक अस्तित्व और गति का परिचय देता है वैसे ही समाज श्रमनिष्ठ तपस्वी शूद्रों के बल पर ही स्थिर रह पाता है। यही रूपक का तात्पर्य है जिसमें शूद्र को उचित महत्त्व दिया गया है। इस रूपक के आधार पर भी समझा जा सकता है कि तथाकथित चार वर्णों के अतिरिक्त अन्य वर्ण वाले ब्रह्म पुरुष के अन्य अंगों के समान होंगे। किसी भी दशा में ऐसे रूपक को मिथ्या धारणा और विवाद का विषय बनाना उचित नहीं है और न ही यह समझना चाहिए कि यह मंत्र वर्णों की संख्या केवल चार तक सीमित करने और उन चार वर्णों में ऊंच-नीच का भाव उत्पन्न करने का समर्थक है।

जातिवाद का अभिशाप

केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के चार वर्णों तक हैं व्यवस्था को सीमित मानने, रूपक पर आधारित मंत्र को संकीर्णतावश गलत समझने तथा पात्रता के होते हुए भी अपने को उच्च वर्ग में स्थापित करते रहने की हठधर्मिता के कारण वर्ण व्यवस्था जन्मगत जाति प्रथा बन गई। जन्म को

जाति का एक सुगम आधार बना लिया गया क्योंकि गुण-कर्म का आधार पुरुषार्थ और साधना की नींव पर ही टिका रह सकता था जिसका निर्वाह करने की बजाय उससे जी चुराना बहुत आसान था। विवादास्पद रूपक को जिस पर विस्तार से चर्चा की जा चुकी है तथाकथित उच्च वर्ण वालों ने एक धार्मिक औचित्य का आधार बना लिया। वैदिक मंत्रों के अनुसार ब्राह्मण माने जाने के लिए ब्रह्म विद्या का ज्ञान, विद्वता, दया, क्षमा आदि उच्च गुण आवश्यक थे। परन्तु इनकी साधना सुविधा प्रेमी जन करते कैसे? इसी प्रकार क्षत्रिय (जिसे उच्चता में नम्बर दो पर माना गया) को बल, पराक्रम और शौर्य में पारंगत होना चाहिए था तभी तो वह राष्ट्र की रक्षा करता। परन्तु इन गुणों की साधना करना भी सरल नहीं था। पात्रता की उच्च सिद्धियां प्राप्त किए बिना वर्ण में ऊंचा माने जाने के दंभ को साधे रहने के लिए जन्मगत जाति का रास्ता सरल दिखाई पड़ा और बड़े पैमाने पर प्रमादवश इसको अपनाया जाने लगा। ऊंच नीच की खाइयां गहरी होती चली गईं और सारा देश वर्ग विभाजन और विद्वेष का शिकार हो गया। महान दुख का विषय है कि जिस देश ने **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** का उपदेश दिया वह स्वयं भीतर-भीतर टुकड़े-टुकड़े हो गया। मैत्री और प्रीति का स्थान द्वेष, छूआछूत और भेदभाव ने ले लिया। चार वर्णों को आधार बनाकर जातियों का सृजन हुआ। अन्तर्विभाजन होते-होते वे भी एक से अनेक होती चली गईं और उनके अन्दर भी अलग से वर्ग भेद और ऊंच-नीच का जहर फैलता जा रहा है। पता नहीं यह विच्छिन्नता कहां जाकर रुकेगी।

वैदिक व्यवस्था का स्वरूप

वैदिक मंत्रों ने सीधी सी एक बात यही कही है कि व्यक्ति व समाज की सद् आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये विभिन्न प्रकार के कार्य करने वाले व गुण रखने वाले व्यक्ति होने ही चाहिएं और दुष्कर्म करने व दुगुर्ण रखने वाले व्यक्ति समाज से दूर रहें। वेद मंत्रों के निर्देशन के अनुसार वांछनीयता और अवांछनीयता में पहचान की गई है। कार्यों का वरण अर्थात् चयन अपनी-अपनी योग्यता, रुचि के अनुसार ही होगा। इसी प्रकार गुणों का चयन स्वभाव और शिक्षा के अनुसार होगा। इस वर्ण चयन प्रक्रिया में कोई पाबंदी बिल्कुल भी नहीं है सिवाय इसके कि व्यक्तिगत दुष्कर्मों और दुगुर्णों का चयन कदापि न करें। क्योंकि ऐसा करना समाज के लिए अवांछनीय होगा। कर्म व गुण का चयन एक स्वाभाविक प्रक्रिया होगी और स्पष्ट है कि जो जिस उपयोगी कार्य को जीविकोपार्जन के लिए मुख्यतः चुनेगा और करेगा वह उसको वैसा ही जानेगा तथा स्वयं को उसका करने वाला मानेगा। यही उसका वर्ण होगा क्योंकि वैदिक मंत्रों की व्यवस्था के अनुसार सद्कार्य का वरण करना ही व्यक्ति के वर्ण का आधार होगा। समाज के लिए उपयोगी कार्य भी असंख्य होंगे और इस प्रकार वर्ण भी अनेक होंगे केवल चार तक सीमित नहीं होंगे। मनुष्य अपनी रुचि और परिस्थिति के अनुसार कार्य वर्ण बदल भी सकेगा और उस दशा में बदले हुए कार्य की दृष्टि से उसका वर्ण जानना चाहिए। आज किसी का वर्ण अध्यापक या आचार्य हो सकता है, कल को एक सैनिक अधिकारी बनकर वह क्षत्रिय बन सकता है। कृषक वर्ण वाला कल को मणिकार या भिषजम् बन सकता है। केवल शारीरिक श्रम से रोजी रोटी कमाने वाला कल को पढ़ लिखकर शूद्र वर्ण से हट कर आचार्य, क्षत्रिय वैश्य या अन्य किसी भी वर्ण में जा सकता है। वैदिक वर्ण अवधारणा में बहुत व्यापकता और लचीलापन है। उसमें कहीं भी पत्थर या लोहे की दीवारें नहीं खीची गई हैं। जन्मगत आधार तो केवल उस स्वार्थ की उपज है जिसके कारण किसी तथाकथित ब्राह्मण की संतान वेदादि ब्रह्मविद्या पढ़ने पढ़ाने का कष्ट किये बिना और विद्वान के योग्य गुणों को धारण करने की साधना किए बिना अपने आप को श्रेष्ठ मानने और मनवाने का दुस्साहस करता है या इसी प्रकार किसी क्षत्रिय का पुत्र देशरक्षा का कोई कार्य किए बिना एक अध्यापक, कृषक या कार्यालय में केवल एक क्लर्क होते हुए भी क्षत्रिय होने की बात करता है। ऊंच-नीच की भावना से प्रेरित यह स्वार्थी आधार वेद मंत्रों की आत्मा के सर्वथा विरुद्ध है।

जहां वर्ण का चयन अपनी-अपनी क्षमता, योग्यता, रुचि और गुण आदि के आधार पर माना गया हो वहां वर्ण के विषय में चयन या परिवर्तन करने पर किसी भी प्रकार की घोषणा की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि स्वाभाविक रूप से समाजोपयोगी कार्य होते ही रहेंगे और विभिन्न व्यक्ति रुचि और योग्यता के अनुसार उनका वरण भी करते रहेंगे। प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यों से अपने आप वैसा ही जाना जायेगा और वह स्वयं को अपने आप वैसा ही समझेगा भी। वर्ण अवधारणा को एक तकनीकी संवेदनशील मुद्दा बनाना वेदानुकूल नहीं है। सामाजिक हित की कसौटी, कार्यों व गुणों के आधार पर वर्णों की अनेकता, चयन और परिवर्तन की स्वतंत्रता, ऊंचनीच के भेदभाव के स्थान पर परस्पर मैत्री और प्रीति का संबंध ही वे तत्त्व हैं जिनसे वैदिक वर्ण व्यवस्था का स्वरूप निर्मित होता है। ❑

एक सच्चे आर्य—डॉ० भीमराव अम्बेडकर

❑ कूनराड एल्स्ट

कूनराड एलस्ट प्रसिद्ध बेल्जियम विद्वान हैं। वे भारत अध्येता हैं। उनकी ताजी पुस्तकों में से एक है—"डॉ० अंबेडकर : ए ट्रू आर्यन" जिसको वायस आफ इंडिया दिल्ली ने छापा है। यहां उसके चुने गए अंशों का सार हिन्दी में प्रस्तुत है।

डॉ० भीमराव अंबेडकर में अनंत-जिज्ञासा थी। उन्होंने अपने एक लेख में लिखा है—"कुछ भी अपरिक्षणीय नहीं है, कुछ भी सदा-सदा के लिए बाध्यकारी नहीं है। हर वस्तु की जांच और खोज की जानी चाहिए।

भारतरत्न डॉ० भीमराव अम्बेडकर का नाम जपने वाले लोग डॉ० साहब के इस कथन को स्वयं उन पर लागू नहीं करते, यह दुर्भाग्यपूर्ण है। अब डॉ० अंबेडकर को भी एक संत बना डाला गया है, जिनके वचनों का जप होता है लेकिन उन पर मनन नहीं।

डॉ० अंबेडकर ने अपने समुदाय और समस्त देश की महान सेवा की। अछूतों के सामाजिक और राजनीतिक उत्कर्ष के लिए किए गए उनके काम की चर्चा तो पर्याप्त होती है लेकिन देश के बारे में उनके जो महत्त्वपूर्ण विचार हैं उन्हें प्रायः उपेक्षित किया जाता है। यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि वे भारत के कानून मंत्री भी रहे थे और भारत के संविधान को संविधान सभा तथा उसकी विभिन्न समितियों द्वारा मूर्त रूप देने में उन्होंने निर्णायक भूमिका निभाई। अपने असंतोष के कारण विधि मंत्री का पद उन्होंने असमय ही छोड़ दिया। इसका मुख्य कारण था—भारत के "अहिंसक स्तालिन" जवाहरलाल नेहरू की तानाशाही भरी और गौरव से रहित कार्यशैली के प्रति उनका तीव्र असंतोष। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू से गहरे असंतोष के कारण वे अपने पद से अलग हो गए और उसके बाद अछूतों के लिए काम करते रहे तथा उन्हें बौद्ध मठ में धर्मान्तिरित करने की तैयारी में काफी समय लगाया।

डॉ० अंबेडकर एक सच्चे देशभक्त थे। वे भारत की सुरक्षा और कल्याण चाहते थे। जब जवाहरलाल नेहरू ने दुश्मनों के कब्जे से कश्मीर को वापस लेने की भारतीय सेनाओं की योजना सफल होते-होते रोक दी अथवा जब नेहरू ने तिब्बत पर चीन को आक्रमण करने दिया तब दोनों ही मौकों पर डॉ० अंबेडकर ने तीव्र मतभेद व्यक्त किया। पहले अवसर को इन्होंने इस्लामी आक्रमण का खतरा बताया और दूसरे को कम्युनिस्ट आक्रमण कहा। उन्होंने लिखा — प्रधानमंत्री ने व्यवहार में चीन की इस बारे में मदद की है कि उसकी सीमाएं भारत की सीमाओं से आ जुड़ें, अगर भारत पर आक्रमण का तत्काल खतरा न भी रहे तो भी जिन लोगों को आक्रमण की आदत पड़ चुकी है उनके प्रति हमारा खुला रहना खतरनाक है।

यहां डॉ० अंबेडकर की प्रसिद्ध पुस्तकों का सार संक्षेप में स्मरण कर लेना उपयुक्त होगा।

पाकिस्तान और इस्लाम

"पाकिस्तान आर द पार्टिशन आफ इंडिया" में अंबेडकर लिखते हैं कि 'मिस मेयो की पुस्तक 'मदर इंडिया' में हिन्दुओं के विरुद्ध हद से अधिक दुर्भाव है। यद्यपि वह पुस्तक हिन्दू समाज की बुराइयों को उद्घाटित करके एक अच्छा काम करती है। तब भी वह एक बहुत बड़ी गलतफहमी संसार में यह फैलाती है कि सामाजिक बुराइयां केवल हिन्दुओं में है और मुसलमान सामाजिक बुराइयों से मुक्त हैं तथा हिन्दुओं की तुलना में अधिक प्रगतिशील हैं। जबकि सच्चाई यह है कि मुस्लिम समाज में सामाजिक विषमता के अनेक रूप भरे पड़े हैं और वहां बाल विवाह तथा नारी उत्पीड़न के भी कई रूप मौजूद हैं।"

"विचारों की जो एकरूपता इस्लाम में होती है वह दूसरों पर बलात आरोपित की जाती है। और इसीलिए अहिष्णुता से जुड़ी यह भावना हिंसा और दमन को जन्म देती है लेकिन तुर्की जैसे देशों में सामाजिक सुधार की दिशा में जो कदम उठाए गए हैं वे भारत के मुसलमानों के लिए भी रास्ता दिखा सकते हैं।"

इस्लाम को लेकर गांधी जी से डॉ० अंबेडकर तीव्र असहमति व्यक्त करते हैं। वे लिखते हैं— गांधी जी ने मुसलमानों को उस वक्त भी कुछ भी नहीं कहा, जबकि मुसलमानों ने हिन्दुओं के विरुद्ध स्पष्ट अपराध किए जैसे

कि मोपला विद्रोह में अथवा मुहम्मद और कुरान के आलोचकों को मुसलमानों द्वारा हत्या की श्रृंखला में अथवा २३ दिसम्बर १९२६ को स्वामी श्रद्धानन्द की अब्दुल रशीद द्वारा हत्या किए जाने पर अथवा 'रंगीला रसूल' के लेखक संपादक राजपाल को ६ अप्रैल १९२९ को दुकान के भीतर घुसकर छुरे से मार डालने पर अथवा आर्य समाजी नेता लाला नानक चंद की हत्या पर अथवा मथुरामल शर्मा की सिंध के न्याय आयुक्त की भरी अदालत में सितम्बर १९३४ में अब्दुल कयूम द्वारा हत्या किए जाने पर इत्यादि। दुर्भाग्य की बात यह है कि प्रमुख मुसलिम नेताओं ने इन सब अपराधी मुसलमानों का यह कहकर साथ दिया कि इनके यह काम कुरान के मुताबिक ही हैं। इन सब मामलों में महात्मा गांधी का रवैया मेरी समझ में बिलकुल नहीं आता। एक ओर तो गांधी जी हिंसा की प्रत्येक घटना पर अपनी तीव्र असहमति दिखाते हैं। दूसरी ओर मुसलमानों के इन अपराधों पर कोई विरोध ही नहीं जताते। शायद उनका मानना यह है कि कुछ हिन्दुओं की हत्या से भी यदि हिन्दू मुस्लिम एकता का लक्ष्य प्राप्त हो सकता है तो ऐसा बलिदान देने में हर्ज ही क्या है लेकिन एकता के ऐसे प्रयास कभी भी सफल नहीं होने वाले इससे तो दरार बढ़ती ही जाएगी।

इसी पुस्तक में आगे डॉ० अंबेडकर लिखते हैं— "मौलाना आजाद सुभानी का कहना है कि हमारी असली लड़ाई हमारे २२ करोड़ हिन्दू दुश्मनों से है जो कि बहुसंख्यक हैं। वे अगर शक्तिशाली हो गए तो वे न केवल भारत के मुसलमानों को पचा जाएंगे बल्कि इजिप्त, तुर्की, काबुल और मक्का को भी पचा जाएंगे। इसीलिए हर सच्चे मुसलमान का फर्ज है कि वह मुसलिम लीग में शामिल हो और हिन्दुओं का राज रोके तथा अंग्रेजों के विदा होते ही भारत में फिर से मुसलिम राज स्थापित करे। स्पष्ट है कि मुसलमानों के मन में हिन्दुओं के प्रति जब तक ऐसा भाव रहेगा। तब तक वे दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। यह समझना बिल्कुल गलत है कि हिन्दू मुसलिम झगड़े का कारण अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति है असलियत तो यह है कि हिन्दुओं और मुसलमानों में झगड़े का कारण ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक हैं। दोनों में बहुत पुराना टकराव है।"

जब कांग्रेस ने बिना समुचित योजना के बंटवारा स्वीकार कर लिया और दंगे शुरू हो गए तो लगभग ६ लाख लोग दोनों तरफ मार डाले गए। डॉ० अम्बेडकर ने इसके लिए कांग्रेस को जिम्मेदार माना क्योंकि उसने कभी भी यथार्थ का सामना नहीं किया। इसी प्रकार बंटवारे के प्रति पाकिस्तान में अनुसूचित जातियों के साथ जो बर्ताव किया गया, उसके प्रति डॉ० अम्बेडकर ने तीव्र विरोध जताया तथा मांग की कि उन्हें हिन्दुस्तान आने से रोका न जाए। उन्हें जबरन मुसल्मान बनाना बंद किया जाए।"

डॉ० अंबेडकर ने यह बार-बार कहा कि "बौद्ध धर्म के पतन का मुख्य कारण मुस्लिम आक्रमण ही थे। इसलाम ने भारत, ईरान, अफगानिस्तान, बैक्ट्रिया, पार्थिया, गांधार, चीनी, तुर्कीस्तान आदि में बौद्ध धर्म को नष्ट किया। नालंदा विश्वविद्यालय नष्ट किया। बौद्ध विहार नष्ट किए ओर हजारों बौद्ध भिक्षुओं की हत्या मुस्लिम सेनापतियों ने की।"

कास्ट्स इन इंडिया : जाति ब्राह्मणों ने नहीं रची है

अपनी पुस्तक "कास्ट्स इन इंडिया" में डॉ० अंबेडकर कहते हैं— "मनु ने जाति व्यवस्था नहीं रची है। जाति तो मनु से बहुत पहले से थी। मनु ने उसे एक दार्शनिक आधार दिया। जाति प्रथा का विस्तार इतना विराट है कि वह किसी एक व्यक्ति या वर्ग के द्वारा फैलाया जाना असंभव है। वह तो समाज में अनेक स्तरों पर विकसित व्यवस्था है। जाति न तो मनु ने रची न ही ब्राह्मणों ने। ब्राह्मण कई बातों के लिए दोषी हो सकते हैं परन्तु जाति व्यवस्था रचना उनके वश की बात नहीं थी। वैदिक समाज में अन्य समाजों की ही तरह वर्ग व्यवस्था थी। उसमें पहले तीन वर्ण थे— ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लेकिन शूद्र वर्ण पहले नहीं था। वह बाद में विकसित हुआ। हिन्दू इतिहास में किसी समय पुरोहित वर्ग ने स्वयं को समाज में अलग एक वर्ग के रूप में स्थिर कर लिया। तभी वे धीरे-धीरे एक जाति ही बन गए।

बाद में समाज में अन्य लोगों ने भी ब्राह्मणों का ही अनुसरण किया और अनेक स्तरों पर जाति भेद बन गए।

जाति को नस्ल समझना गलत

डॉ० अंबेडकर ने जाति को नस्ल समझने की यूरोपीय धारणा का तीव्र प्रतिवाद तथा खंडन किया है। वे कहते हैं कि ऐसा मानना सत्य से बहुत दूर है। डॉ० अंबेडकर कहते हैं कि डॉ० केतकर की यह स्थापना बिल्कुल सत्य है कि आर्य हमारे यहां सामाजिक संबोधन है। उसका किसी नस्ल से कोई रिश्ता नहीं। जिस प्रकार यूरोप में "एरिस्ट्रोक्रेसी"

शब्द है, उसी प्रकार भारत में "आर्य" शब्द है। उसका किसी नस्ल से कोई संबंध नहीं।

डॉ० अंबेडकर की इस पुस्तक में मुख्य निष्कर्ष यह है–"जाति की समस्या का मेरा अध्ययन यह बताता है कि – (१) हिन्दुओं में एक समंवित समाज संरचना है और यहां कई तरह की नस्लें घुल मिलकर रहती हैं लेकिन हिन्दुओं में एक गहरी सांस्कृतिक एकता है। (२) जाति व्यापक सांस्कृतिक इकाई का एक अंग है। (३) प्रारम्भ में सभी हिन्दुओं की एक ही जाति थी। (४) बाद में अलग अलग वर्ग सामाजिक अनुकरण और विधि तथा निषेध के नियमों के द्वारा जातियां बनते गए।

आर्य आक्रमण की धारणा झूठी है

"हू वर दि शूद्राज" में डॉ० अंबेडकर ने विश्व अध्ययन किया। उन्होंने आर्य आक्रमण सिद्धान्त को पूरी तरह ठुकरा दिया। वे कहते हैं कि "ऋग्वेद में ऐसा रत्तीभर भी संकेत नहीं है कि आर्य लोग भारत में बाहर से आए। बल्कि सच तो यह है कि वैदिक साहित्य में इसके विरुद्ध ही साक्ष्य है। वैदिक साहित्य से यही पता चलता है कि आर्य सदा भारत में ही रहते थे। यही उनका मूल निवास स्थान है। इसी प्रकार आर्यों और दासों या दस्युओं के बीच जो संघर्ष हुआ। 'दास' का अर्थ यज्ञ के कर्मकांड न करने वाले तथा वैदिक प्रार्थना न करने वाले ही हैं जो एक ही समाज का अंश हो सकते हैं। उनका कोई अलग समाज होना आवश्यक नहीं है। दासों को आर्य से अलग किसी नस्ल का मानना बचकानी बात है।

आगे डॉ० अंबेडकर 'मृध्रवाक' 'अनास' और 'कृष्णयोनि' शब्दों की मीमांसा करते हैं और बताते हैं कि इनका कुल अर्थ भाषा का सही प्रयोग न कर सकने वाले और निन्दा वाचक ही है, न कि नस्ल वाचक 'कृष्णयोनि' का अर्थ 'अंधेरे में भटकने वाले' अर्थात अध्यात्मिक अंधकार से ग्रस्त व्यक्ति के अर्थ में है। इस प्रकार यह एक तरह की निन्दा है। नस्ल से इसका कोई रिश्ता नहीं। डॉ० अंबेडकर ने इन सबकी अत्यन्त विस्तृत मीमांसा की। इसी तरह 'वर्ण' का अर्थ रंग किए जाने का भी उन्होंने उपहास उड़ाया। उन्होंने विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण के द्वारा स्पष्ट किया कि वेद में वर्ण का प्रयोग वर्ग के अर्थ में है, न कि रंग के अर्थ में।

'हू वर दि शूद्रास्' का सार संक्षेप यह है–

१. शूद्र सूर्यवंशी आर्यों का एक अंग थे। २. पहले आर्य समाज में तीन ही वर्ण थे– ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य। ३. शूद्र कोई अलग वर्ण नहीं था। वे क्षत्रिय वर्ण के ही अंग थे। ४. शूद्र राजाओं की ब्राह्मणों से वर्षों तक लड़ाई चली। शूद्र राजाओं ने ब्राह्मणों का अपमान और उत्पीड़न किया। ५. फलस्वरूप ब्राह्मणों ने शूद्रों की निंदा शुरू की और उनका उपनयन कराने से इनकार कर दिया। इस कारण शूद्र राजा जो कि क्षत्रिय थे, पतित मान लिए गए और क्रमशः शूद्र नाम का एक चौथा वर्ण ही बन गया।

इस प्रकार डॉ० अंबेडकर के विचार विस्तृत अध्ययन पर आधारित थे। उनसे सहमति तथा असहमति अपनी जगह है लेकिन स्वयं को अंबेडकरवादी कहने वाले लोग भी डॉ० अंबेडकर के विचारों से अनजान हैं और कई बार उनका खंडन किए बिना ही उनसे विरोधी विचार व्यक्त करते रहते हैं, यह आश्चर्यजनक है।

१००/ रु० दान देने वाले

सर्वश्री–पी० सी० श्रीमाली–उदयपुर, जयराम आर्य–बम्बई, बी० एल० राजा–बम्बई, रतनेश कुमारी-अलीगढ़, वासदेव लाल धवन-नई दिल्ली, वीरय्या गुप्त-हैदराबाद, शान्ति नन्दन-नई दिल्ली, वासदेव लाल धवन, नई दिल्ली, रामप्यारी अग्रवाल-भिवानी, रामहित सिंह-सत्री सैदपुर, पंचराम आर्य-रायपुर, प्रह्लाद वर्मा-मऊ, डॉ० सत्यपाल-चंडीगढ़, नन्दलाल भूराम-खरड़, भगवान दास गोयल-दार्जिलिंग, जितेन्द्र सिंह काम्बोज-दिल्ली, लक्ष्मीचन्द्र-बांरा, विमल बग्गा-वाराणसी, राम कुमार-इन्दौर, डॉ० बैजनाथ गुप्त-नई दिल्ली, मगन लाल-पंचमहाल, गणेश रोडगे-लातूर, डॉ० एम० एम० बरनवाल-कल्याण, शान्ति भंडारी-बीकानेर, जे० पी० व्यास-रायगढ़, महात्मा आर्यभिक्षुः-ज्वालापुर, कावले नामदेव बीदर, रामकृष्ण भारती-नई दिल्ली, सुनील दत्त शर्मा-दिल्ली।

५० रु० दान देने वाले

सर्वश्री–शान्ति भटनागर-सीतापुर, डॉ० बलदेव राज-रोहतक, आशा श्रीधरराव-नागपुर, त्रिभुवन नाथ-दिल्ली, बालकृष्ण युग-नई दिल्ली, गोपीलाल शर्मा-पूना, अमल वार्ष्णेय-चन्दौसी, गोपाल सेठ-गाजीपुर, आर्य समाज घनौरा-मेरठ, सी० पी० विश्वकर्मा-गोरखपुर, ओम प्रकाश पासी-लुधियाना, हीरालाल सर्राफ-मेरठ, शंकर लाल-चित्तौड़गढ़, सरोज-मेरठ, भृगुनाथ त्रिपाठी-देवरिया, जयनारायण-आजमगढ़, अमीलाल आर्य-फरीदाबाद, भेराराम आर्य-शिवगंज, कन्हैया लाल वानप्रस्थी-दिल्ली। सभी दानदाताओं का धन्यवाद।

मैथिली शरण गुप्त के काव्य में राष्ट्रीय भावना

❑ दीप शिखा शर्मा

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए॥

अपनी अमर लेखनी से उपरोक्त पंक्तियां सृजित करने वाले राष्ट्र कवि मैथिली शरण गुप्त ने जीवन पर्यन्त इन्हीं पंक्तियों को आदर्श मानकर उपदेश, ज्ञान और पथ प्रदर्शन युक्त काव्य का सृजन किया। अपनी प्रारम्भिक कृति 'रंग में भंग' से लेकर अन्ति कृति 'विष्णु प्रिया' तक की काव्य यात्रा के प्रत्येक पड़ाव में गुप्त जी की लेखनी ने उद्देश्यपरक काव्य धारा को ही प्रवाह प्रदान किया, फिर चाहे वे पौराणिक कृतियां, 'जयद्रथ वध', 'तिलोत्तमा', चन्द्रहा, शकुन्तला, पत्रावली, त्रिपथगा, नहुष और शक्ति हो या जातीय कृतियां 'हिन्दू और गुरुकुल, काबा और कर्बला हो या साहित्यिक कृतियां पंचवटी, साकेत, द्वापर, अनघ, यशोधरा, सिद्धराज और कुणाल गीत हों या ऐतिहासिक कृतियां 'रंग में भंग' और 'विकट भट' हों या रहस्यवादी कृतियां—'मंगल घट और 'झंकार' हों या फिर राष्ट्रीय कृतियां—'पद्य प्रवन्ध', 'भारत भारती', स्वदेश संगीत, 'वैतालिक', किसान और अजित ही क्यों न हों।

इसी उद्देश्यमूलक काव्य को अपना इष्ट मानकर गुप्त जी ने राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत जो काव्य धारा की कलकल निनाद करती सरिता प्रवाहित की, उसने उन्हें 'राष्ट्रकवि' के उच्च और गरिमामय आसन पर बिठाने में तनिक भी हिचक नहीं दिखाई और गुप्त जी ने भी उस आसन की मर्यादा पूरे तन-मन से निभाते हुए अपने आपको राष्ट्र के साथ एकाकार कर दिया। भारत के प्रति असीम प्रेम ही गुप्त जी की थाती थी, जिसको उन्होंने जीवन पर्यन्त सहेज कर रखा। अपने देश के कण-कण से उन्हें असीम स्नेह था, मोह था और प्रेम था। वे भारत की जयगाथा गाते थे, सुनते थे और सुनाते थे— **जय भारत भूमि भवानी, अधरों ने भी तेरी महिमा बारम्बार बखानी।**

यह उद्घोष करने वाले कवि को अपनी मातृभूमि के प्रत्येक कण में एक अलौकिक सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। ऐसे अद्वितीय सौन्दर्य से युक्त देश की रक्षा के लिए कौन ऐसा हृदयहीन वीर होगा जो आगे बढ़कर इसकी रक्षा के लिए की जाने वाली पुण्य आहुति में अपना अमूल्य योगदन देने से इन्कार करेगा। आतताइयों से इसकी रक्षा के लिए कवि इसके सौन्दर्य की ओर भारतवासियों का ध्यान आकर्षित कर, उसकी सुरक्षा का आश्वासन चाहता है—

मेरे भारत! मेरे देश। बलिहारी तेरा वर बेश,
बाहर मुकुट विभूषित भाल भीतर जटा जूट की साल
ऊपर नभ नीचे पाताल बंधन में भी मुक्ति निवेश
मेरे भारत! मेरे देश।

गुप्त जी मन और कर्म, दोनों से ही भारत पर आसक्त थे और सम्पूर्ण विश्व में भारत को सर्वोपरि मानते थे। इसीलिए वे चाहते थे कि भारत परतंत्रता की लौह श्रृंखलाओं से मुक्त हो जाये, वर्षों से सोये भारतीयों के हृदय में स्वतन्त्रता का स्पन्दन हो, उसमें देशप्रेम की भावना जाग्रत हो। प्राचीन गौरव गान से उन्होंने सोये हुए जनमानस को जगाने की चेष्टा की—

देखो हमारा विश्व में कोई नहीं उपमान था।
नर देव थे हम और भारत देवलोक समान था।

गुप्त जी चाहते थे सुप्तप्राय भारतीय मन-मस्तिष्क अपने आदि पुरुषों के समान ही पुनः वीरता धारण करे और इन लाल मुंह वाले अंग्रेजों को भारत से भाग जाने के लिए विवश कर दे। इसी भावना को ज्वलन्त रूप देने के लिए, राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत गुप्त जी का सिंहनाद गूंजा और फिर करोड़ों भारतीयों के गले की गूंज बन कर सड़कों-सड़कों, गलियों-गलियों में गुंजायमान हो उठा—

तुम हो उनकी संतान, बने कि जिनसे विश्व विधान।
खोजे गूढ़ जिन्होंने तत्त्व, पाया है उज्ज्वल अमरत्व।
जिनका त्याग और तप देख, बदली स्वयं कर्म की रेख।
डोल उठा इन्द्रासन आप, वज्राधिक था जिनका श्राप।

गुप्त जी का मन चीत्कार कर रहा था, ऐसे वीर पूर्वजों के वंशधरों की दयनीय स्थिति देखकर। अपनी छटपटाहट को व्यक्त करता हुआ उनका स्वर कहता है— **पूर्व पूर्वजों की शिक्षा तरंगों में बहो।**

पूर्वजों से शिक्षा ग्रहण करने की गुहार करते उनके मानस पटल पर स्मित के समान कौंध जाता है। चित्तौड़ और चित्तौड़ की चमकती तलवारें। गुप्त जी चाहते हैं कि

पुनः उस जंग लग गई तलवार पर शान धरी जाये, जिससे वह तलवार एक बार फिर उसी आन-बान-शान के साथ अपनी सम्पूर्ण दिव्य छटा दिखाते हुए चमके—

आज भी चित्तौड़ का सुन नाम कुछ जादू भरा।
चमक जाती चंचला सी चित्त में करके त्वारा॥

मैदाने जंग में आने का आमंत्रण देने वाली गुप्त जी की लेखनी उन्हें मृत्यु से भयभीत न होने का संदेश देने के साथ ही साथ वास्तविक वस्तुस्थिति को स्पष्ट करते हुए समझाती है—

जिस पृथ्वी से मिले हमारे पूर्वज प्यारे,
उससे हे भगवान! कभी हम रहें न न्यारे।
लोट-लोट कर वहीं हृदय को शांत करेंगे,
उससे मिलते समय मृत्यु से नहीं डरेंगे।
उस मातृभूमि की धूल में, जब पूरे सन जायेंगे।
होकर भव बन्धन मुक्त हम, आत्मरूप बन जायेंगे॥

स्वतंत्रता की गुहार करता राष्ट्र कवि का हृदय परतंत्रता की घुटन को स्वयं और अन्य देश प्रेमियों के मानस में महसूस करता है। इसीलिए कवि स्वतंत्रता प्राप्ति की इच्छा को अधिकार के स्वर का पुट देकर स्वच्छ वायुमंडल में सांस लेने की प्रेरणा देता है—

बढ़ो बन्धुओं, हीन भाव से ऊपर उठकर,
रहो न तुम संकीर्ण वायुमंडल में घुटकर।

कवि का मानना है कि जो भारत भूमि सदियों से हमारी है, उस पर हमारा ही अधिकार होना चाहिए। अपने पूर्वजों की धरती पर उन्हें किसी और का आधिपत्य स्वीकार नहीं। कवि अपने पूर्वजों की वसुन्धरा को स्वयं सजाना संवारना और निखारना चाहता है। इसके लिए वह अपने देशवासियों का आह्वान करता है—

निर्मित तुमने यहां किये थे तपोवन,
इसी अवनि पर तुम उतार सकते हो नन्दन।

गुप्त जी चाहते थे कि भारतीयों में पुनः उद्योग करने की इच्छा जाग्रत हो, वे परिश्रम करें, अपनी शक्ति का सदुपयोग करें और निराशा त्याग कर अपनी मेहनत से इस धरा को फिर से स्वर्ग सा सुन्दर बना दें। इच्छाशक्ति को संगठित करता कवि अतीत गौरव को जगाकर वर्तमान सुधारने की प्रेरणा देता है—

भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया,
नर को ईश्वरता प्राप्त करने आया।
सन्देश यहां मैं नहीं स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।

पतनोन्मुख देशवासियों की स्थिति से दुखी कवि का हृदय उन्हें एक साथ मिल बैठकर समक्ष उपस्थित समस्त समस्याओं को सुझाने के लिए आमंत्रित करता है—

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्यायें सभी॥

खंडों में विभक्त लोगों को एकता के सूत्र में बांधने का दृढ़ संकल्प लेने वाला चतुर कवि यह जानता था कि जब हम सब एक होंगे और व्यर्थ के जाति-पांति, ऊंच-नीच, छुआछूत जैसे टंटों को छोड़ देंगे, तभी हम आगे बढ़ सकेंगे और तभी भारतीयता की विजय होगी, हमारी विजय होगी, राष्ट्र की विजय होगी—

सुख दुख में एक सा, सब भाइयों का भाग हो,
अन्तःकरण में गूंजता राष्ट्रीयता का राग हो।

स्वाधीनता की कामना करता कवि भगवान की चरणरज लेकर अन्तःस्थल से प्रार्थना करता है—

मानस भवन में आर्यजन, जिसकी उतारें आरती।
भगवान भारतवर्ष में, गूंजे हमारी भारती।

भारत की यश गाथा गाने वाली, भारतीयों में स्वतंत्रता की चाह जगाने वाली, भारत की मिट्टी में अपने आपको समाहित करने वाली एकता और उन्नति की कामना करने वाली हे राष्ट्रकवि की लेखनी, तुम्हें शत-शत प्रणाम।

गीता में आया है कि परोपकार के बिना हम भोजन करते हैं, तो चोरी करते हैं। परोपकार से हमारा जीवन आगे चलता है। परमेश्वर ने हमें जो भी सामर्थ्य दिया है उससे परोपकार करें। प्रभु ने मुझे यदि धनवान बनाया है तो मेरा कर्त्तव्य बनता है कि मैं निर्धन बहन-भाईयों की उससे सेवा करूँ, दान करूँ, मदद करूँ। धन की दो ही गतियाँ शास्त्रों में बताई गई हैं। यदि धन का सदव्यय करोगे, दान करोगे, दूसरों की मदद करोगे तो उसका पूरा-पूरा लाभ उठा लोगे, वरना पड़ा-पड़ा धन नष्ट हो जाता है। साथ तो जाता नहीं। साथ तो नेक कर्म ही जाएंगे।

पागल कौन? गाय या आदमी

❑ डॉ० ए० के० अरुण

इन दिनों ब्रिटेन में (मैड काउ) गायों को पागल करने वाला रोग बेहद चर्चा का विषय बना हुआ है। जब से इंग्लैंड में गायों को पागल बनाने वाले रोग 'बोवाइन स्पांजीफार्म एन्सेफैलोपैथी' (बी० एस० ई०) से करीब एक दर्जन अंग्रजों के मरने की खबर प्रकाश में आई है तब से वहां के मांसाहारियों में दहशत है, क्योंकि यह खतरनाक रोग पागल गायों का मांस खाने वालों में पनप रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इस संभावना की पुष्टि की है। विगत महीने विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक आपात बैठक में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिकों ने गायों को पागल बनाने वाले रोग बी० एस० ई० के मनुष्यों पर प्रभाव को गंभीर बताया हैं। एक चौंकाने वाली खबर यह भी है कि पागल गायों वाली यह बीमारी भारतीय लोगों को भी अपने गिरफ्त में ले चुकी है। सूक्ष्म जैविक विशेषज्ञों के अनुसार भारत में यह घातक मष्तिष्क संक्रमण की बीमारी भेड़ के दिमाग से बनाए गए रैबीज के टीके से फैली है, जिसके उपयोग की निर्धारित तिथि समाप्त हो जाने पर भी उसे लोगों के उपयोग में लाया गया था। एक प्रतिष्ठित समाचार एजेंसी की खबर के अनुसार भारत में १९९४ तक इस बीमारी के लगभग २६ मामले प्रकाश में आए थे। इसके बाद बंगलौर के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरो साईंस में दो मामले और आए। एक न्यूरो सर्जन ने तो दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में भी इस बीमारी के कुछ रोगियों का अध्ययन किया था।

बताया जाता है कि ब्रिटेन की गायों में 'बोवाइन स्पांजीफार्म एन्सेफैलोपैथी' नामक यह घातक बीमारी १९७० ई० में भेड़ों के संक्रमण से फैली थी। यह संक्रमण तब फैला जब गायों को मृत भेड़ों की हड्डियों से बना भोजन या चारा दिया गया। बाद में गाय के दूध से यह बीमारी मनुष्यों में पहुंच गई। वैज्ञानिकों के अनुसार बी० एस० ई० को हिमालय की पहाड़ी क्षेत्र की भेड़ों में १९६१ से ही देखा गया था। यह रोग इतना घातक है कि यदि किसी क्षेत्र के पशुओं में फैल जाए तो रोग को जड़ से खत्म करना असंभव ही है।

ब्रिटेन के एक विख्यात माइक्रोवायोलोजिस्ट रिचर्ड लेसी ने 'मैड काउ डिजीज' नामक पुस्तिका तैयार की है। इसमें बी० एस० ई० रोग की भयावहता का जिक्र है। इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखने वाले ब्रिटेन के नेशनल फूड एलाएंस के अध्यक्ष ज्योफरे फैनन ने चेतावनी दी है कि यदि बी० एस० ई० की रोकथाम शीघ्र नहीं की गई तो यह रोग जानवरों से लेकर मनुष्यों तक में इतने भयानक रूप से फैल जाएगा कि प्लेग जैसी महामारियां भी बौनी सिद्ध होंगी।

पागल गायों के इस रोग को 'क्रुजफेल्ट-जैकब डिजीज' भी कहा जाता है। इस रोग में दिमाग 'ग्रे मैटर' का क्षय रोग लगता है। सेरेबेलम की मांसपेशियों की शक्ति क्षीण होने लगती है। इसे 'कुरू' भी कहते हैं। तेज बुखार, भयंकर सरदर्द, चक्कर आना, उल्टी होना आदि इसके प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग के लक्षणों में मिरगी जैसे लक्षण भी पाए जाते हैं। कहते हैं कि भारत में आज भी पागल कुत्तों के काटने की दवा के रूप में भेड़ के दिमाग से बना टीका ही प्रयोग में लाया जा रहा है। विदेशों में बहुत पहले से यह टीका प्रतिबंधित है लेकिन भारत में लगभग ४० हजार लोगों को कुत्ता काटने पर यही टीका लगादा जाता है। विशेषज्ञों का कहना है कि बी० एस० ई० या पागल गाय रोग के लिए यह टीका भी जिम्मेवार हो सकता है। ब्रिटेन में पागल गायों के रोग से खौफजदा अंग्रेज, जो गाय का मांस बड़े चाव से खाते थे, अब बी० एस० ई० रोग के भय से महज संदेह के कारण लगभग ४७ लाख गायों की हत्या करने का मन बना चुके हैं। योजना है कि अगले छः वर्षों तक प्रत्येक सप्ताह पन्द्रह हजार गायों को मारा जाएगा।

ब्रिटेन से मिली खबरों के अनुसार इंग्लैंड में पागल गायों का मांस खाने से १२ लोग मर गए। इन लोगों में एकदिमागी बीमारी, जिसे 'स्पांजीफार्म एंसेफैलोपैथी' माना गया है, का संक्रमण था और यह संक्रमण पागल गायों का मांस खाने से हुआ मानते हैं। ब्रिटेन ही नहीं समग्र यूरोप के देशों में गोमांस पर पाबंदी लगा दी गई है। ब्रिटेन के कृषि मंत्री डगलस हौग ने गाय मांस का कारोबार करने

वाले अपने नागरिकों को इससे हुए घाटे की भरपाई करने का आश्वासन दिया है। यूरोपीय संघ व ब्रिटिश मंत्रालय ने गाय मालिकों को गायों की कीमतें अदा करने का वचन दिया है। ब्रिटेन को अपनी पागल या पागल मान ली गई गायों को मार कर जला डालना होगा। हालांकि इससे बी० एस० ई० या 'पागल गाय रोग' का जड़ से खत्म हो जाएगा ऐसा नहीं कहा जा सकता है।

गायों के पागल होने या बी० एस० ई० रोग से ग्रसित होने की कहानी भी उतनी ही खौफनाक है जितनी कि इस बीमारी से पीड़ित लोगों की मौत। ब्रिटेन में गायों को दूध के लिए कम, मांस के लिए ज्यादा पाला जाता है। गायें मोटी और मांसल हों, इसलिए उन्हें जानवरों के मांस और हड्डियों के चूर्ण से बने चारे खिलाए गए। इससे गायें बीमार हो गईं और फिर तो इन बीमार गायों के मांस या दूध भी संक्रमित हो गए और आज इसके भयानक परिणाम सबके सामने हैं। ब्रिटेन में लगभग २५ वर्ष पूर्व कुछ वैज्ञानिकों ने शोध के बाद पाया कि गायों को यदि मांसाहार कराया जाए तो उनका वजन बढ़ जाता है। फिर कसाई घरों में काटे गए पशुओं की आंतें व दूसरे बेकार पदार्थों को ही सुखा कर उसका चारा बनाया गया और उसे गायों को खिलाया जाने लगा। विदित है कि ब्रिटेन व दूसरे यूरोपीय देश मांसों के निर्यात से अकूत विदेशी मुद्रा कमाते हैं। शाकाहारी पशुओं के लिए इस मांसाहारी चारे ने बड़ा चमत्कार किया और १९८०-९० के दशक में तो मांस के निर्यात से ब्रिटेन की अर्थ व्यवस्था बहुत मजबूत हो गई। विदेशी मुद्रा का भंडार बढ़ने लगा और मांस के व्यापार से जुड़ा हर व्यापारी अमीर हो गया।

प्राकृतिक शाकाहारी पशुओं को भी महज धन के लालच में मांसाहारी बनाने वाले लोग आज भी अप्राकृतिक व अनैतिक लेकिन समृद्ध जीवनशैली को स्थापित करने में लगे हैं। 'मैड काउ डिजीज" व ऐसी ही अनेक बीमारियों की भयानक उपस्थिति भी इन्हें सोचने पर बाध्य नहीं कर पा रही है। **भारत में चिकन और मांस से बने खाद्य पदार्थों का प्रचलन आजकल बहुत तेजी से बढ़ा है। कई विदेशी कम्पनियां तो बड़े पैमाने पर मांस के व्यवसाय में लगी हैं। 'केंटकी चिकन' 'मैकडोनाल्ड' आदि नाम तो अब भारत के छोटे शहरों में भी कई युवाओं केजुबान पर सुने जा सकते हैं।** अमरीकी कम्पनी मैकडोनाल्ड, जो खान-पान के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मशहूर कम्पनी है इसके लंदन स्थित रेस्तरां में अब बड़े अक्षरों में लिखा मिलेगा 'बीफ नहीं' यानी गोमांस नहीं मिलता है। फिर भी लंदन में आम लोगों ने मैकडोनाल्ड के रेस्तरां का विरोध ही किया है। ऐसा कहा जा रहा है कि मैकडोनाल्ड ने ही ब्रिटेन में 'बी० एस० ई० जैसा घातक रोग फैलाया है। मालूम नहीं कि ब्रिटिश नागरिकों के 'मैकडोनाल्ड' के विरोध का कितना असर विदेशी परस्त भारतीयों पर होगा, लेकिन इसमें शक नहीं कि तमाम विकृत स्थितियों की जड़ें अमरीका में देखने को मिल रही हैं। इसमें शक नहीं कि ब्रिटेन की गायों का मांसाहारी चारा अमरीका से ही मंगाया गया था। अमरीकी वैज्ञानिकों ने ही इसे प्रचारित किया कि जानवरों की अंतड़ियों व बेकार वस्तुओं से निर्मित यह मांसाहारी चारा महज दो ढाई वर्षों में ही पशुओं को दुगुना मांसल बना देता है।

आज भारत में भी तेजी से फास्ट फूड व मांसाहार की प्रवृत्ति बढ़ रही है इसमें अमरीकी व विदेशी प्रभाव तंत्र (मीडिया) का बड़ा योगदान है। खासकर नई आर्थिक नीतियों के लागू होने के बाद मनुष्य के जीवन स्तर में तो नहीं, लेकिन जीवन शैली में बहुत बदलाव आया है। यह बदलाव निश्चित ही अप्राकृतिक है, लेकिन आधुनिकता की चकाचौंध में अंधा व्यक्ति इसके दुःप्रभाव से एकदम बेखबर है।

इस तथाकथित आधुनिकता के तत्त्वों में नैतिकता की जरूरत नहीं होती, बल्कि हो ही नहीं सकती। जीवन से जुड़ी तमाम चीजें मुनाफे से जुड़ गई हैं। हर उत्पादन का संबंध जीवन, मानवता या प्रकृति से कम, मुनाफे से ज्यादा जुड़ा है। ऐसे में जहां भौतिकता में एकदम से उछाल आता है, वहीं जीवन की मौलिक आध्यात्मिकता का पतन होता है और व्यक्ति व्यक्ति न रह कर वस्तु हो जाता है, जिसकी बस कीमत भर लग सकती है और आज आधुनिकता और विकास के नाम पर यहीं हो रहा है। कृत्रिम चीजों पर पला बढ़ा आज का मानव एक संवेदनहीन प्राणी मात्र रह गया है। तभी तो जहां अनैतिक व अप्राकृतिक गतिविधियां बढ़ी हैं वहीं बेहद गंभीर रोग भी बढ़े हैं। एड्स, बी. एस. ई० आदि रोग इसके ही उदाहरण हैं।

आप सोचिए कि भारतीय कृषि से मांस का भला क्या संबंध हो सकता है? क्या मांस उत्पादन अथवा कत्लखाने कृषि के अन्तर्गत आते हैं? आपका उत्तर होगा,

नहीं, लेकिन भारत सरकार की रिपोर्ट इंडिया १९९१ में ऐसा ही है। भारत सरकार ने मांस उत्पादन को कृषि का दर्जा दिया है। पश्चिम के जूठन से प्रेरणा लेकर तथाकथित विकास (विनाश) के रास्ते बढ़ रही सरकारों को आप क्या कहेंगे? पश्चिम परस्त सरकारों का तर्क है कि कत्लखाने (जहां प्रति वर्ष साढ़े सात लाख पशु काटे जाते हैं) से पांच वर्षों में ७२ करोड़ रुपए की आय होती है, जबकि एक आकलन के अनुसार यदि इन्हीं पशुओं को जीवित रखा जाए तो उसके जीवन चक्र से लगभग ९०० करोड़ रुपए की आय हो सकती है।

अंडों के बारे में भी पौष्टिकता का तर्क दिया जाता है। पर वैज्ञानिक सच्चाई है कि अंडों में 'साल्मोनेला टाइफीम्यूरियम' बैक्टीरिया होता है जो टाइफाइड बुखार का जनक माना जाता है। इस बैक्टीरिया के संक्रमण से ब्रांकाइटिस, निमोनिया जैसे रोग भी होते हैं।

वैसे भी मानव या शाकाहारी पशुओं की प्रवृत्ति मांसाहार की नहीं है। इसलिए निश्चित है कि शाकाहारी को मांसाहारी होने का नुकसान तो सहना ही पड़ेगा। मैड काउ डिजीज, एड्स आदि बीमारियां मानव सभ्यता के लिए चेतावनी की तरह हैं। हम चाहें तो एक प्राकृतिक जीवन पद्धति की बदौलत न तो गाएं पगलाएंगी और न ही यह पागलपन मानव व जीव के लिए विनाशकारी होगा। ❑

बच्चे दीर्घजीवी विद्वानों के लिए सुनहरी अवसर

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए

दो रंग में सुन्दर आकर्षक छपाई

(द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

स्थूलाकार बड़े साइज

20 × 30 × 8 में

सत्यार्थ प्रकाश

मूल्य : लागत से कम रु० 50/- प्रति

प्रत्येक प्रति पर 25 प्रतिशत कमीशन

10 से ज्यादा प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें।

प्राप्ति स्थान :-

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट,

455, खारी बावली, दिल्ली-110006

दूरभाष : 238360, 233112, 2922612

स्वास्थ्य चर्चा

आंख के रोग और उपचार

❑ वैद्य विद्याधर व्यास

आंख मानव शरीर का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उसके बिना संसार ही शून्य सा लगता है। इसीलिए तो अपने यहां यह 'कहावत' प्रचलित है—आंख है तो जहान है। सचमुच आंख नहीं तो मनुष्य कुछ नहीं है। ऐसे में हर क्षण, हर पल उसे दूसरे का सहारा चाहिए, किन्तु इस घोर भौतिकवादी युग में कौन किसका सहायक होता है? यहां आंखों के कुछ रोग और उसके उपचार की बात हम बता रहे हैं—आंख नेत्र रोग विशेषज्ञ से मिलें और ऐसी विषम स्थिति में जब तक आप डाक्टर के पास नहीं पहुंच पाते हैं, तब तक आपको स्वयं कुछ न कुछ उपचार करना चाहिए। आंखों में एकाएक सूजन आ जाए तो यह मानकर चलें कि यह अपने से आमंत्रित किया हुआ रोग है। इस सम्बन्ध में विशेषज्ञों की मान्यता है कि ऐसा तब होता है जब कपड़े, तौलिया और अन्य सौन्दर्य प्रसाधनों के सहारे रोगों के कीटाणु आंख में पहुंचकर उसे रोगाक्रांत कर देते हैं।

इससे आंख लाल हो उठती है, पानी और कीचड़ निकलना आरम्भ हो जाता है। सूर्य की रोशनी हो या बिजली बल्ब सहित लालटेन की रोशनी भी अच्छी नहीं लगती, किरकिरापन एवं जलन का अनुभव हो तो ऐसे में गुनगुने पानी से दिन रात में दो बार आंखों को धोयें। कोई एन्टीबायोटिक ड्राप डालें। सुरमा या काजल जैसी कोई चीज नहीं लगायें।

उसी तरह बरौनियों के पास की ग्रंथि में इन्फैक्शन हो जाए जो कि अधिकतर हाथों से ही होता है, यों हवा के लगने से भी ऐसा होता है। इसमें आंखों में लाली छा जाती है। पलकों के किनारे सूजन होकर दर्द होने लगता है। डाक्टरी शब्द में इसे 'विनी' कहा जाता है। इसमें गर्म पानी की पट्टी लाभदायक होती है। सूजनवाली जगह पर गर्म पट्टी का सेक भी लाभकारी होता है। एन्टीबायोटिक्स मलहम भी इसमें लाभदायक है। यदि आंखों में कुछ पड़ गया हो तो आंखों में तेज चुभने वाली दर्द का अनुभव होने लगता है। साथ ही आंखों में लाली छा जाती है। पानी आने लगता है। आंख को बार-बार मलने की इच्छा प्रकट होती है। ऐसे में पलकों को खूब झपकायें। आंखों पर ठंढा पानी के छींटे मारें। मलें नहीं। पड़ी हुई चीज यदि नजर पर आये तो उसे रूमाल के कोने से निकालें, किन्तु पुतलियों को कभी न छुयें। आधे घंटे में आंखों में पड़ी चीज नहीं निकले तो डाक्टर की शरण लें। वैद्य के पास जायें। आंख और उसके आसपास घाव हो गये हों, तो इसमें आंख में सूजन, और खून जैसी सुर्खी छा जाती है। इसमें कभी-कभी जोरदार दर्द सहित धुंधला दिखना आदि लक्षण भी प्रकट होते हैं।

इस रोग में भी ठंढे पानी की पट्टी लाभदायक है। पेटेण्ट दर्द निवारक दवा भी लें। फिर डाक्टर से परामर्श लें। आंख में कभी कभार किसी धारदार चीज या नाखून से खरोंच लग जाती है। इसमें गहरा दर्द, पानी आना, लाली, धुंधला दिखना और रोशनी अच्छी नहीं लगती है। ऐसे में आंख पर ठंढा पानी के छींटें मारें। जितना शीघ्र हो 'वैद्य' या डक्टरी उपचार करायें।

इसी तरह अनेक लोग तब परेशान दिखलाई देते हैं, जब साबुन, शैम्पू, पाउडर, इत्र, तेल गैस आदि चीजें आंखों में पड़ जाती हैं। इसमें जलन का अनुभव तो होता ही है साथ ही आंख खोलने में तकलीफ होती है। आंख में लाली के साथ पानी आने लगता है, धुंधला दिखने लगता है। रोशनी भी अच्छी नहीं लगती।

ऐसे लक्षणों में ठंढे पानी से आंख बार-बार धोयें। तकलीफ अधिक हो तो डाक्टर से मिलें या वैद्य को बुलायें।

दही के गुण

❑ ज्ञानदेव रामचन्द्र चौधरी

भारत में हजारों सालों से दही व मट्ठे का उपयोग औषधि के रूप में किया जाता है। गर्मी के मौसम में दही को मथ कर बनायी छाछ या लस्सी पानी से पेट की गर्मी शांत होती है दही में पानी, मीठे फलों का रस, मिश्री आदि मिलाकर लस्सी बनाकर पीने से गर्मी शांत होने के अलावा यह लू से भी बचाव करती है।

दही में किशमिश, गरी, बादाम, पिस्ता, छुहारा आदि मिलाकर उपयोग में लाने से शरीर का वजन बढ़ता है।

कब्ज में दही के मट्ठे में अजवाइन मिलाकर पीने से कब्ज दूर होता है व पेट साफ रहता है।

अपच, अफरा, अजीर्ण आदि में दही की लस्सी बनाकर उसमें जीरा काली मिर्च नमक मिलाकर पीने से फायदा होता है। दही के मट्ठे के साथ प्रतिदिन ५ कलियां लहसुन का रस या सोंठ का चूर्ण मिलाकर पियें, तो महिलाओं को कमर दर्द से छुटकारा मिलेगा।

दही मुंह के छालों की जलन कम करता है। मुंह के छालों पर दही की मलाई लगाने से छालों की जलन शांत होती हैं दिन में कई बार ऐसा करने से छाले ठीक हो सकते हैं।

दही में शहद मिलाकर चाटने से बच्चों के मुंह में दांत आने पर आराम मिलता है। ❑

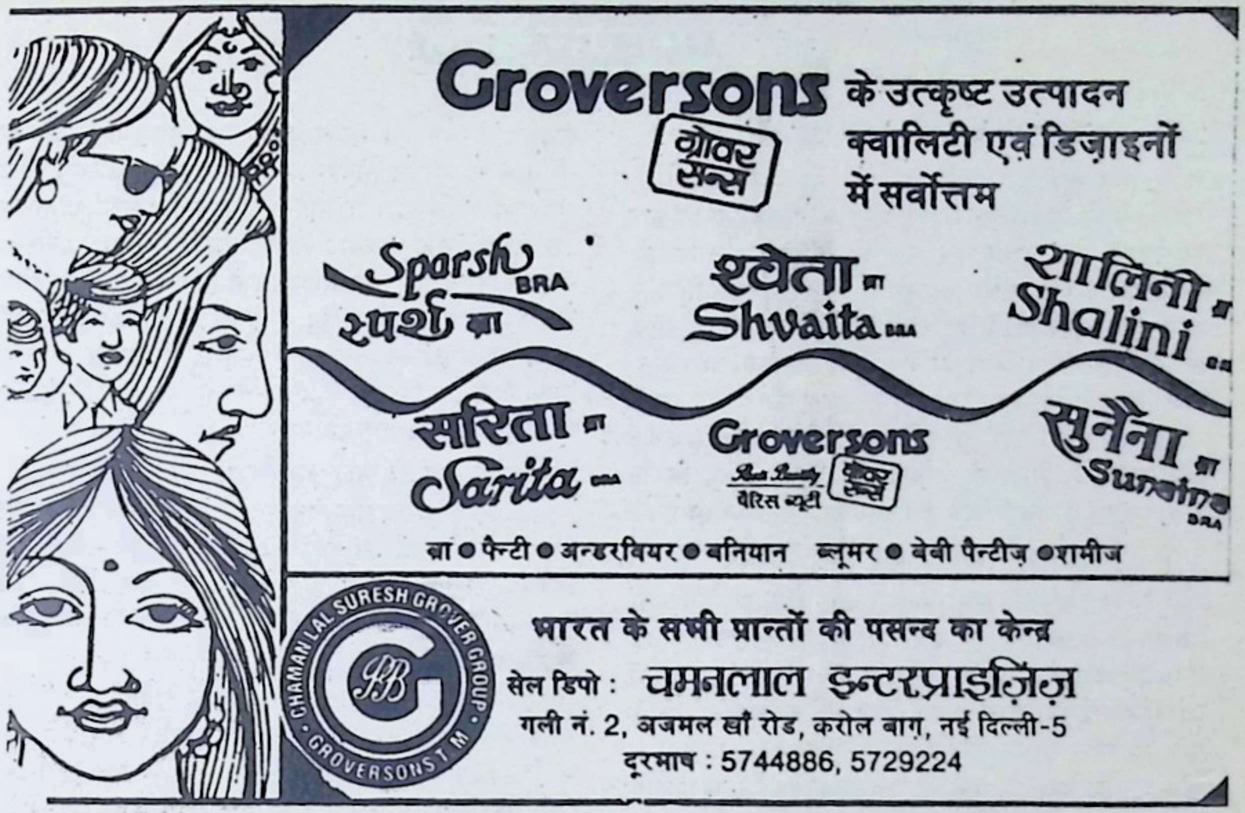

आन्तरिक वस्त्रों में अग्रणी-ग्रोवर सन्स

आजकल के इस कम्प्यूटर युग में महिलाओं की इच्छाओं के साथ-साथ उनकी आवश्यकताओं में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं। कल की सुविधाएं आज की जरूरत बन गई हैं इस तरह महिलाओं के रहन-सहन में आधुनिक क्रांति आई है। लेकिन रेडीमेड वस्त्रों में पहला क्रांतिकारी परिवर्तन आज से करीब १०० साल पहले ही हो गया जब फ्रांस के हरनाम रैडशेली ने पैरिस में ब्रेजियर का आविष्कार किया था। तब से आज तक में ब्रेजरी उद्योग में अनेक परिवर्तन हुए हैं। आज से लगभग तीस वर्ष पूर्व महिलाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए चमन लाल ग्रोवर के नाम से अंतरराष्ट्रीय स्तर के ब्रा एवं पैंटीज का उत्पादन शुरू किया।

ग्रोवर सन्स के ब्रा एवं पैंटिस सादे डिजाइनों के साथ-साथ एक से बढ़कर एक फैंसी, डिजाइनों में उपलब्ध हैं। जो सूती, रूबिया, टेरीकाट, कैमारिक तथा विभिन्न सिंथेटिक कपड़ों तथा नायलान लैस के कपड़ों से बनाई जाती हैं। दिल्ली के प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र करोल बाग के ग्रोवर सन्स के डायरेक्टर राकेश ग्रोवर ने एक भेंट में बताया कि ग्रोवर सन्स द्वारा बनाए जा रहे स्पर्श शालिनी, सरिता ब्रा एवं पैंटीज की फैंसी रेंज के सभी प्रांतों के हर वर्ग की महिलाओं के फैशन के अनुसार आधुनिक डिजाइन में बनाए जाते हैं।

समाचार दर्शन

विरक्तों हेतु प्रशिक्षण शिविर

गत वर्ष की भांति इस वर्ष भी पूज्यपाद स्वामी दिव्यानन्द की अध्यक्षता में एक माह का शिविर इस प्रकार लग रहा है— ३ जून से १६ जून तक वैदिक साधन आश्रम तपोवन (देहरादून) तथा १७ जून से १ जुलाई तक पातञ्जल योगधाम आर्यनगर हरिद्वार में आयोजित होगा। इसके अन्तर्गत पातञ्जल योग दर्शन पढ़ाया जायेगा। व्याख्यान, कला आयुर्वेद का ज्ञान, योगासन, ध्यान एवं प्राणायाम के अतिरिक्त यज्ञ संध्यादि का सही मन्त्रोच्चारण तथा अन्य कई आवश्यक तथ्य समझाये जायेंगे। जो विरक्त हैं या विरक्त होना चाहते हैं उनके लिये यह कार्यक्रम उपयोगी होगा।

साधना-स्वाध्याय एवं सेवा शिविर

परोपकारिणी सभा अजमेर के तत्वावधान में साधना स्वाध्याय एवं सेवा शिविर का आयोजन हुआ। सेवा के कार्य में साधकों ने समय दिया। उसी क्रम में दूसरा शिविर जून में आयोजित होगा। इसमें वैदिक सिद्धान्तों का ज्ञान कराने के साथ ही योग साधना का क्रियात्मक अभ्यास भी कराया जायेगा। शिविर एक जून से १० जून १९९६ तक ऋषि उद्यान पुष्कर रोड अजमेर में सम्पन्न होगा।

आर्य समाज गढ़हरा एवं बरौनी का वार्षिक उत्सव

आर्य समाज गढ़हरा एवं बरौनी का वार्षिक उत्सव २५ मार्च से २८ मार्च तक धूमधाम से मनाया गया। इसमें पंडित ज्ञानेश्वर भारती, यमुनानगर (हरियाणा), पंडित सदानन्द शास्त्री बैरगनिया (सीतामढ़ी) श्री अग्निव्रत (भजनोपदेशक) नालंदा एवं श्री वीरेन्द्र आर्य भजनोपदेशक (गाजीपुर) ने भाग लिया।

आर्य समाज बरेली का निर्वाचन

प्रधान—गजेन्द्र पाल सिंह अधिवक्ता, उपप्रधान—श्री अरविन्द अग्रवाल अधिवक्ता, मंत्री—श्री तुलसीराम आर्य, उपमंत्री—श्री हाकम सिंह आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री राम भरोसे आर्य शिक्षक, प्रचारमंत्री—श्री कमलेश कुमार आर्य व श्री अजय सिंह आर्य चुने गये।

वयोवृद्ध हिन्दू नेता का निधन

ग्वालियर के वयोवृद्ध हिन्दू नेता पं० घनश्याम दास शर्मा का निधन १७ अप्रैल बुधवार को हो गया है। उनकी स्मृति में आयोजित शोकसभा में विभिन्न दलों के नेताओं ने श्री शर्मा को श्रद्धांजलि अर्पित की। स्वर्गीय शर्मा स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के ध्येयवाद के प्रति समर्पित अथक कार्यकर्ता थे। उन्होंने विभिन्न जन आंदोलन में सक्रिय रहते हुए अनेक बार कारावास भी भोगा था। जनज्ञान और दयानन्द संस्थान के भी वह प्रमुख सहयोगी रहे। दयानन्द संस्थान व जनज्ञान उनके शोकाकुल परिवार के प्रति संवेदना और दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करता है।

श्री मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार

आर्य समाज शान्ताक्रूज द्वारा संचालित षष्ठम श्री मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार के लिए प्रविष्टियां आमंत्रित की जाती हैं। पुरस्कार प्राप्त लेखक को रुपये १५,०००/= की राशि, रजत ट्राफी व शाल से सम्मानित किया जायेगा।

नियम—१. जिस आर्य विद्वान् ने जीवन पर्यन्त वैदिक साहित्य के द्वारा आर्य समाज की अधिकतम सेवा की हो। २. जिनके प्रकाशित ग्रंथों का संबंध आर्य समाज के दर्शन, इतिहास, सिद्धान्त अथवा आर्य महापुरुषों के जीवन आदि से है, वे ही पुरस्कार की सीमा में माने जाएंगे। ३. लेखक का चयन एक समिति करेगी जिसका मनोनयन आर्य समाज सान्ताक्रुज करेगा। आर्य समाज सान्ताक्रुज की अन्तरंग सभा का निर्णय अन्तिम निर्णय माना जाएगा। ४. इस पुरस्कार हेतु लेखक अपने ग्रथों की दो-दो प्रतियां संयोजक—आर्य साहित्य पुरस्कार आर्य समाज सान्ताक्रुज बम्बई-५४ को ३० अप्रैल १९९६ तक भेजने की कृपा करें।

कैप्टन देवरत्न आर्य, संयोजक पुरस्कार समिति

सुभाष शाखा-केशव नगर (इब्राहीमपुर) के मुख्य शिक्षक राधेश्याम एवं गणशिक्षक दीनानाथ जी एवं लाल बाबू ठाकुर ने मिलकर एक गरीब परिवार की लड़की एवं अनाथ लड़के की शादी रचवाकर महत्वपूर्ण कार्य किया। इस अवसर पर बुराड़ी तहसील से शाखा के अधिकारीगण एवं स्वयं सेवकों ने वर-वधू को आशीर्वाद एवं आर्थिक सहयोग दिया। झण्डेवालान मन्दिर से साड़ी चुनरी प्रदान की गई। हनुमान मन्दिर समिति नत्थूपुरा एवं अन्य सहयोगियों का सहयोग भी मिला।

जिसके घर में वेद नहीं
वह हिन्दू का घर नहीं

(परमात्मा की अमर वाणी)

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य १२००/–रुपये
अभी लेने पर **९००/–रुपये में**

[मन्त्र–शब्दार्थ–छन्द–स्वर–देवता आदि सहित]
२३×३८ से०मी० साइज में, पृष्ठ २२००
बढ़िया सुनहरी जिल्दें। वजन लगभग ८ किलो

श्रेष्ठ बढ़िया पेपर पर २४००रु० अब १८०० रु० में प्राप्त करें

आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा ½ धन अवश्य भेजें।

पं० राकेशरानी अध्यक्ष **दयानन्द संस्थान**
वेद मन्दिर महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, इब्राहीमपुर, दिल्ली-३६

सम्पर्क कार्यालय : २२८६, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली–११०००५ दूरभाष–५७२४७४१

जन-ज्ञान (मासिक) वेद मंदिर महात्मा-
वेदभिक्षुः सेवाश्रम लेखरामनगर (इब्राहीमपुर)
पो.आ. मुखमेलपुर, दिल्ली-110036

ज्येष्ठ सम्वत--2053
मई 1996

Posted at N.D. PSD on
Date 5 & 6-Delhi Postal
Registration No. DL-11185/96
R.N. 10719.65

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

1.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	मूल्य 1200 रू.
2.	सामदेव : आध्यात्मिक भाष्य (पं. विश्वनाथ विद्यामार्त्तण्ड)	101 रू.
3.	वेद-ज्योति चारों वेदों के चुने हुये 100-100 मन्त्रों की व्याख्या)	30 रू.
4.	वेदांजलि : (वर्ष के 365 दिनों के लिए 365 वेद मन्त्रों की व्याख्या)	50 रू.
5.	सोमसरोवर : (सामवेद के पावमान पर्व की व्याख्या)	50 रू.
6.	भारत के वीर बच्चों की कहानियां	6 रू.
7.	संस्कार विधि (सजिल्द)	30 रू.
8.	सरस्वतीन्द्र जीवन (महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र)	50 रू.
9.	यज्ञ - मीमांसा (अग्निहोत्र दर्पण) (डा. रामनाथ वेदालंकार)	50 रू.
10.	धर्म का सार (धर्म का रहस्य बताने वाली कथायें)	6 रू.
11.	ज्योति स्तम्भ	15 रू.
12.	वैदिक सम्पत्ति	151 रू.
13.	धर्म का मार्ग (धर्म के दस लक्षणों की सरल व्याख्या)	6 रू.
14.	योगासन	4 रू.
15.	योग और ब्रह्मचर्य	6 रू.
16.	Concept of God	50 रू.
17.	श्रीमद्दयानन्द प्रकाश	50 रू.
18.	Light of Truth	180 रू.
19.	प्रकृति और सर्ग (आचार्य उदयवीर शास्त्री)	10 रू.
20.	वैदिक गीता का सरल हिन्दी भाष्य	50 रू.
21.	संक्षिप्त महाभारत	50 रू.
22.	संक्षिप्त रामायण	15 रू.
23.	ऋग्वेद-शतकम	6 रू.
24.	वैदिक सान्ध्य गीत	6 रू.
25.	गायत्री मन्त्र का चार्ट, हिन्दी व्याख्या सहित दोनों ओर पत्ती लगा, कम से कम दस प्रति मंगायें	3 रू.

100 से अधिक साहित्य पर कमीशन 15 प्रतिशत 300 से अधिक लेने पर 20 प्रतिशत तथा 500 से अधिक लेने पर 25 प्रतिशत होगा। **आदेश के साथ चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।**

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य बांटिये

1.	मोपला (उपन्यास) - वीर सावरकर	6.00 रू.
2.	क्या आप सारा भारत दारूल इस्लाम बनने देंगे ?	1.00 रू.
3.	हिन्दुओं को चेतावनी - वेदभिक्षुः	1.00 रू.
4.	भारत के मुसलमानों का क्या करें ? - वेदभिक्षुः	1.00 रू.
5.	हम सब हिन्दू हैं - वीर सावरकर	1.00 रू.
6.	पोस्टर दो प्रकार के	2.00 रू.
7.	इस्लाम में क्या है ? - "राकेश रानी;	1.00 रू.
8.	इस्लामिस्तान बनाने की तैयारियाँ- -जहीर नियाजी	1.00 रू.
9.	हिन्दू जागो! देश बचाओ	1.00 रू.
10.	इस्लाम - एक परिचय	1.00 रू.
11.	A Challange to the Christian Faith	50 पैसे
12.	पोप की सेना का भारत पर हमला -वेदभिक्षुः	1.00 रू.
13.	पादरियों को चुनौती	1.00 रू.
14.	बाईबल की चुनौती	1.00 रू.
15.	क्या ईसा खुदा का बेटा था ?	1.00 रू.
16.	और पादरी भाग गया	1.00 रू.
17.	Christianity Unmasked	2 रू.
19.	हमने इस्लाम क्यों छोड़ा ?	1.00 रू.
20.	क्या भारत का एक और विभाजन होगा ?	1.00 रू.
21.	हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का संदेश	1.00 रू
22.	हिन्दू जागेगा, देश का संकट भागेगा।	1.00 रू.
23.	जनज्ञान का 'सावरकर विशेषांक'	6 रू.
24.	जनज्ञान का 'क्रान्तिदूत विशेषांक'	6 रू.

"हिन्दू धर्म रक्षक" साहित्य की 1000 पुस्तकें मंगाने पर 50 प्रतिशत और 500 पुस्तकें मंगाने पर 25 प्रतिशत कमीशन है। **प्रत्येक आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा कम से कम चौथाई धन अग्रिम भेजें।**

व्यवस्थापक - दयानन्द संस्थान

2286-आर्य समाज मार्ग नई दिल्ली-5